भी कि जो कहीं कुछ मलीन भी होजाय स्वच्छ-प्रवाह करदेताहै चकोरको जो सुख कि चंद्रमासे मिलताहै वह क्या किसी नक्षत्रसे मिल सकता है, देख बेटी! जलचाहे कमलको कितनाही घेरे परंतुवह अपना धर्म नहीं छोडता अर्थात् सदा. उसके ऊपरही रहताहै इसीभांति तूभी करियो चाहे कितनीही आपदिमें पडै अपना धर्म कदापि नत्यागियो आकाशसे जो पानी वर्षाके द्वारा गिरताहै वह पृथ्वीमें मिलकर शुद्ध होता है इसी रीतिसे स्त्रीभी अपने पतिमें मिलकर अर्थात् उसकी आज्ञानुसार कार्य करके शुद्ध होतीहै और जो पतिसेवक है वह शील गुण सम्पन्न भी अवश्य होगी शील धर्मका पालना और अपने पतिकी यथायोग्य सेवा करना स्त्रीके लिये यही मुक्ति मार्गहै इससे विरुद्ध चलना इसलोक और परलोक दोनोंमें दुःखदायी है मित्रता का संबंध काँचकी चूडीके समान है इसे बडी सावधानीसे रखना चाहिये नहीं तो टूटे पीछे जुड़ना कठिन होताहै• बहुधा स्त्रियां अपने पतिको गुप्त बात मतिमन्दोंसे कहदेतीहैं और शनैः शनैः वह बात उसके पतिके कान तक पहुंच गई तो स्वयम् विरोध खडा होता है ऐसे स्त्री अथवा पुरुषोंका विश्वास न करना चाहिये और उनकी बातों में आकर अपना भेद न कहना चाहिये यदि अपने पतिकी सेवासे कभी अवकाश मिलै तो अच्छे जनोंका प्रसंग करना चाहिये सज्जन समाजमें प्रीति करने और मनको माँजनेसे काक भी बुरी वाणीको छोड कोयलकी मधुर धुनि करने लगता है और बगले मछलियोंके भोजनको त्याग समुद्र से मोती चुनने लगते हैं-पारससे मिलकर लोहा भी

सोना हो जाता है यदि विधि इच्छासे सज्जन मनुष्य कुसंगतिमें भी पडजाय तो वह अपने गुणोंसे प्रकाशित ही रहता है मलीन नहीं होता किंतु खोटे संगीको भी विख्यात कर शोभा देता है जैसे कि मणि सर्पके शीश पर भी प्रकाशित होती है, विशेष तुझसे क्या कहूं जो जो गुण उत्तम और पतिव्रता स्त्रियोंमें होते हैं वह सब तुझमें विद्यमान हैं सूर्यके प्रकाश को दीपककी आवश्यकता नहीं परंतु मेरा धर्म यही है सो जतला दिया ॥

सो०-बेटी निजसुखजार राम भरोसे छोडती ।
मॉंगौं हाथ पसार तेरो अमर सुहागही ॥
शील धर्म नहिं जाय विधना ऐसो कीजियो ।
शील रहत दृग थाय तेरो अमर सुहागही ॥
सघन आपदा माहिं सर्व देव रक्षा करैं ।
राक्षस नाहिं सताहिं तेरो अमर सुहागही ॥
निशिदिन बुद्धि प्रकाश चंद्रभानु और सुरगुरु ।
होन देहिं नहिं नाश तेरो अमर सुहागही ॥
धारण करन अकाश थिर पृथ्वी चलती हवा ।
निशिदिन करहु प्रकाश तेरो अमर सुहागही ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश बारहु राशि रु नवग्रह ।
साय करौ सँग शेश तेरो अमर सुहागही ॥
मेरो आशीर्वाद भयको निकट न आनदे ।
मेटै सकल विषाद तेरो अमर सुहागही ॥

( आँखोंमें आँशू लाकर ) बेटीजा, तेरी वाट सरलहो ईश्वर तेरे परिश्रमका अति उत्तम फलदे ( सुलोचनासे ) अरी सुलोचने ! कुछ दूब तोलेआ ( आंशू टपकताहै ) बेटीको विदाकरदूं-

सु०-जो आज्ञा ( जाकर दूब लेआतीहै )

सा०-( माताके आंशू पोंछकर और उसके पैरोंपर गिरकर ) माताजी ! मैंने आपकी कुक्षामें जन्म लिया ( आंशू डबडबाकर ) और आपकी गोदमें इतनी बडी हुई मुझसे बहुतसे अपराध हुए होंगे परंतु आपने सब क्षमा किये आपसे विलग होनेको जी नहीं चाहता और मेरे यहां रहने में भी आपके और पिताजीके चित्तको विश्राम नहीं मिलता नदीके वेगके समय समुद्रके जल पर चंद्रमाकी ही शक्ति अधिक होती है अबमैं अपने सर्व अपराधोंकी क्षमा मांगकर आपके चरणोंको प्रणाम करतीहूँ और आज्ञा चाहतीहूँ-

मा०-( सुलोचनासे दूब लेकर और सावित्रीको देती हुई ) अच्छापुत्री ! जाओ कुशल पूर्वक रहना-

सा०-( सुलोचनासे ) आ सखी तुझसे भी विदाहोलूं ( गले मिलतीहै )-

सु०-( आंशू डबडबाकर ) आज तेरे विवाहका समाचार सुनकर हमारा हर्ष और शोक बराबर है हमको अपनीदासी समझकर भूल मत जाना और कृपा दृष्टि रखना-

सा०-मेरी भी तुमसे यही प्रार्थनाहै ( रोतीहै )

( नैपथ्यमें )

सुलोचना ! सावित्रीको भेजदे महाराज तय्यार खडेहैं, महाराज नारदजी भी वाट देख रहे हैं-

मा०-बेटी अबजा द्वारपाल पुकाररहा है-

सा०-जो आज्ञा-( आंशू बहाती हुई जाती है )

मा०-बेटी आंशुओंको रोक और हर्ष पूर्वक अपने आश्रमको सिधार यह शुभ घडी है-

( सब जातेहैं )

## द्वितीय गर्भांक ।

( स्थान वन )

( एक ब्राह्मण आता है )

ब्रा०-( आपही आप ) आज यह घोड़ोंकी टापका शब्द इस वनमें कहांसे सुन पड़ता है ( एक ओरको देखता हुआ ) इस रथपर चढ़ाहुआ यह कौन चला आता है चेष्टासे तो ऐसा जाना जाता है कि कोई बडा प्रतापी राजा है कोई हो चलकर आशीर्वाद तो दूं ( आगे बढकर प्रगट ) महाराजका अखंड प्रताप हो--

अ०-हे ब्रह्मदेव ! तुमको हमारीभी दंडवत हो इस वनमें शलवा देशके राजा द्रुमतसेनका आश्रम कहाँ है ? यदि आपको मालूम हो तो बतलाइये-

ब्रा०-( उँगलीसे बतलाकर ) महाराज ! वह देखिये उस शालवृक्षके नीचे कुशासनपर ध्यान लगाये वेही तो विराजे हुए हैं ( आपही आप ; देखना तो चाहिये कि इस राजाका द्रुमतसेनसे कि जो अपना राज्य नष्ट होजानेपर यहां पडा है क्या प्रयोजन है ( राजाके साथ हो लेता है )

सा०-( दूरसे देखकर ) क्या यही हैं महाराज द्रुमतसेन जो थोडे काल पीछे हमारे श्वशुर होंगे ?

अ०-पुत्री ! क्या तैंने पहिले इनके दर्शन नहीं कियेथे-

सा०-नहीं पिताजी मैं उस बनमें जहां कि होकर हम अभी आये हैं राजकुमारसे मिलकर और उनका सब वृत्तांत पूछकर चली गई थी-

( स्थान वन द्रुमतसेनका आश्रम )

द्रुमतसेन-( शैल्यासे ) यह घोडोंकी टाप रथोंकी गुमक और बहुतसे आदमियोंका शब्द कहांसे आ रहा है--

शैल्या--( एक ओरको भली भांति देखकर ) महाराज कोई महा प्रतापी राजा एक कन्या और एक ऋषिको अपने साथ रथपर लिये हमारीही ओर चला आताहै, अब सब रथसे उतर पडेहैं और वेही तीनों प्राणी सारी सेनाको छोड़ पैदल आरहेहैं एक आश्रमवासी ब्राह्मणभी उनके पीछे है–

सा० – ( आपही आप ) अरे मन ! अब तो धीर्यधर तेरी इच्छा पूरण होनेका समय निकट है, सामने प्रियतम प्यारे पिताके पूजनार्थ पुष्प चुन रहेहैं यद्यपि उनकी दृष्टि अभी मुझपर नहीं पड़ी परंतु मेरे पिताके संगकी बहुतसी भीड़भाड़को देखकर कैसे आश्चर्यमें आरहेहैं और मनकी आकर्षणशक्ति ने उनको कैसा विह्वल करदियाहै कि अपने कार्यको छोड़ चारों ओर कैसे ताक रहेहैं मानों बहुत दिवसकी खोईहुई वस्तु फिर मिला चाहतीहै–

अ०--( द्रुमतसेनके निकट जाकर ) महाराजको नमस्कारहो--

द्रु०--मेराभी नमस्कारहै आप कौनहैं कहांसे आगमन हुआ ? मुझ अभागेको अब आप ऐसा क्यों सम्बोधन करतेहैं ?–

अ०–क्यों नहीं, आप हमारे तो महाराजाहीहैं–

द्रु०–यहआपकी दयाहै जो ऐसावचन अपने मुखपंकजसे निकालतेहैं मैं इस योग्य नहीं हूं–

अ०--आप सब कुछ योग्यहैं,अब मेरी प्रार्थना सुनिये--

द्रु०--क्या आज्ञा करतेहैं, महाराज–

अ०--मैं मद्रदेशकी प्रजाका दासहूं अश्वपती मेरा नामहै अपनी इकलौती कन्या सावित्रीको आपकी

सेवामें लायाहूं इसे अपने पुत्र सर्वगुण सम्पन्न और रूपवान् सत्यवान्के निमित्त स्वीकार कीजिये महाराज नारद मुनिजीभी साथहैं-

द्यु०-( आह्लादपूर्वक ) अहा ! हा!! हा !!! अहो भाग्य हमारे! जो मुनिमहाराज़ने इस कुटीकी भूमिको अपने पद पंकजसे पवित्र किया (नारदजीसे) महाराज विनयपूर्वक दंडवत करताहूं, अपराध क्षमा कीजिये, क्या करूं नेत्रोंने दुखी कर रक्खाहै-

ना०-आपकी तपस्या सफलहो आप निर्दोषहैं-

द्यु०-आपबडेहैं सब पर दया भाव रखतेहैं ( अश्वपतीसे ) हे नरेश ! हम अभागे फल पात खाकर अपने दिवस व्यतीत करतेहैं और इस कुटीमें पडेहैं तुम्हारी कन्या भवनोंकी वासी इस वनके कांटोंका दुःख कैसे सहेगी और बकलेके वस्त्रमें इसका कोमल शरीर कैसे विश्राम पावैगा-

सा०-( आपही आप ) बकलेके वस्त्रादिक और वनका निवास तो प्रिय सत्यवान्के निकट किंचित् मात्र भी दुखदायी न होगा-

द्यु०-महाराज हमतो विपत्तिके मारे इस अखंड वनमें पडेहैं आपकी कन्या इस आपत्तिको कैसे सह सकैगी-

ना०-(द्युमत सेनसे) हेराजन्! वायूमें विनाधूप त्रसरेणु कभी दिखलाई नहींदेते परंतु सूर्यकीकिरण उनपरपडतेही अगणित चमकने लगते हैं कौन जाने दैवकी कृपासे आपका भाग्य त्रसरेणु और सावित्रीका आपके निकट रहना सूर्यवतहोजाय हे शलवाधीश ! महाराज अश्वपतीकी प्रार्थनाको स्वीकार कीजिये-

शैल्या-( आपही आप ) क्या इस पृथ्वीपर ऐसे भी

मनुष्यहैं (सावित्रीकी ओर देखकर) अहो ! इसके मुखपर तो दृष्टि नहीं ठहरती, यह राजा इसे यहां क्यों लायाहै। सचतो यह है कि यह मेरे बेटेके ही योग्यहै (द्रुमतसेनसे प्रगट) महाराज ! यदि अब हम इस योग्य नहीं रहे कि महाराजाओंसे संबंध करें परंतु इतने बड़े महात्मा कहैं तो उनके बचनका अपमान भी करना अनुचितहै–

अ०–(द्रुमतसेनसे) महारानीजी सत्य कहतीहैं अपराध क्षमाहो इसविषयमें सर्व कहना आपका व्यर्थ होगा मेरी प्रार्थना स्वीकार करनी ही पड़ेगी (द्रुमतसेनके पुत्र सत्यवानको आताहुआ देखकर) क्या यही महाराज द्रुमतसेनकी वृद्धावस्थाकी लाठी हैं। क्या इसीका नाम सत्यवानहै (सावित्रीसे) पुत्री यही तेरा भावी भरताहै ?–

सा०–(लज्जित होकर) हां पिताजी–

अ०–सत्यहै निर्मल नदी समुद्रको छोड़ पोखरमें काहेको प्रवेश करैगी–

स०–(सावित्रीको देखकर आपही आप) अरे ! क्या यह वही प्राण प्यारी सावित्रीहै; क्या यह वही मेरे मनकी चोर है कि जो कहतीथी कि मैं अपने पिताको लेकर शीघ्रही आऊंगी ? क्या यह अपने पिताको मेरे पिताके पास लेआई है। मैं इस समय क्या देख रहाहूँ हैं ! हैं!! क्या स्वप्नावस्थाहै। नहीं ! नहीं !! मैं जाग्रितहीहूँ मेरे नेत्र खुले हुएहैं कानोंसे उनका सब वार्तालाप भी सुनताही हूँ (सावित्रीसे नेत्र मिलाकर, प्रगट) हे प्राणप्यारी ! (इतना कह कर मूर्छित हो गिरताहै)–

सा०-( उठकर ) अहो प्राणनाथ! उठो सचेत ( इतना कह कर मूर्छितहो गिरतीहै )-

अ०-हैं ! हैं! यह क्या हुआ ( द्रुमतसेनके कमंडलसे जल छिडककर ) चेत करो, चेत करो तुम्हारी प्रीतिका प्रमाण भली भांति होगया ( द्रुमतसेनसे ) अबविशेष आप मुझसे क्या कहलवातेहैं, एक दूसरेके नेत्र मिलते ही दोनों मूर्छित होगये ( जल छिडककर ) सचेत हो, सचेत हो,-

स०-और सा०-( उठकर और एक दूसरेके ओर देख कर लज्जितहो शिर नीचाकर बैठजातेहैं )-

द्रु०-हे राजन्-इन दोनोंकी परस्पर प्रीति देखकर अब मेरा अन्तःकरण भी आज्ञा नहीं देता कि आपके और मुनि महाराजके बचनोंका अपमान करूं धर्म विवाह कर दीजिये-

सा०-( आपही आप ) अरे मन ! अब क्यों व्याकुल होताहै, तेरी वासनाकी बात तो द्रुमतसेनने कहदी-

अ०- ( ब्राह्मणसे ) लो महाराज तो अब विलंब किस कारण, उचितरीति से विवाह कराइये-

ब्रा०- ( अग्नि प्रज्वलित करके ) सत्यबान यहांआओ इसके निकट बैठो ( साविश्रीसे ) पुत्री तूभीआ ( दोनों बैठते हैं )

अ०- ( जल हाथमें लेकर ) हे सत्यवान मैं अपनी कन्या का हाथ अग्नि-ब्राह्मण और नारदजीको साक्षी करके तुम्हें सौंपता हूं ( हाथसौंपकर जल छोडता है ) अब यह तुम्हारे आधीन हुई और तुम्हारा धर्म इसका पालन और इसका धर्म तुम्हारी सेवा हुआ-

स०- ( आपही आप ) यदि मैं शशिधरको भी स्पर्शकरता तो इतना आनन्द प्राप्त न होता कि जितना इस चंद्रवदनी के हाथ छूनेसे प्राप्त हुआ ( प्रगट ) महाराज ! मैंभी वचन देता हूं कि आपकी सुतासे कदापि विमुख न हूंगा-

( एक ऋषिसमूह आकर बैठजाता है )

द्रु०-( सर्वकी ओर ) हेप्रियवर महाशयो ! आपने अपने चरणारविन्दोंसे मुझको मेरे कुल तथा स्थानको पवित्रकिया मैं उसका कहांतक धन्यवाद दूं मेरे अहोभाग्यहैं इस भारतवर्ष में जो ऋषि मुनि आदिकी पवित्रभूमि है सदैवसे पुरुष स्त्री विवाह द्वारागृहस्थ आश्रममें प्रवृत्त होते चले आये हैं विवाह के लिये माता पिता का मुख्य कर्तव्य यही है कि बर और कन्या का जोडा समान रूप आयु विद्या व गुण आदि देखकर मिलावै सो तो देवनेही मिलादिया इसलिये ( ब्राह्मण की ओर ) हे प्रज्ञजन यज्ञकर्त्ता श्रेष्ठविद्वान् विप्रेंद्र ! आप वेद मंत्रोंसे धर्मशास्त्रके अनुसार विधिपूर्वक इन दोनोंका संबंध कराइये और इस यज्ञशाला में उपस्थित सज्जनोंके सन्मुख मेरी प्रतिज्ञा और मनोकामना को पूरण कीजिये ईश्वर मेरे मनोर्थ को भली भांति सफल करै-

सा०-इस यज्ञशाला में उपस्थित हे सज्जनो! मैं आपके सन्मुख प्रसन्नता पूर्वक गृहस्थाश्रममें एकत्र रहनेके लिये इस वरको स्वीकार करतीहूँ और प्रतिज्ञा करतीहूँ (सत्यवानकी ओर ) हे नाथ ! इस समयसे मैं आपकी दासी हुई-

स०-हे प्रिये वरा! मैं भी इससमय से तुमको अपनी अर्धांगी जानताहूँ-

सा०-जो तन मन धन मेराहै सब आपकी भेट है-

स०-मेरा भी जो तन मन है सब तुम्हारे अर्पणहै-

सा०-मैं आपका संग किसी अवस्थामें न छोडूंगी-

स०-मैं भी ऐसाही करूंगा-

सा०-कोई काम आपकी रुचि तथा सम्मति विना न करूंगी-

स०-मैं भी यही प्रतिज्ञा करताहूँ-

सा०-आपको प्रसन्न रखना सदा अपनाधर्म समझूंगी अर्थात् आपकी प्रसन्नतामें प्रसन्न और अप्रसन्नतामें अप्रसन्न रहूंगी-

स०-मैं भी ऐसा ही करूंगा और यथाशक्ति तुमको प्रसन्न रक्खूंगा मनुजीने कहाहै कि जिस घरमें स्त्री प्रसन्न रहतीहै वह सदैव प्रफुल्लित होताहै-

सा०-आपकी आज्ञाकारिणी बन जोस्त्रियोंका महत् धर्म है मैं सदैव अपना जीवन सफल करूंगी-

स०-ईश्वर ऐसाही करै-

सा०-( ऊपरको हाथ करके )हे जगदात्मा जगदीश्वर मैंने जो इन विद्वज्जनोंके सन्मुख प्राणनाथसे प्रणकियेहैं उनका यथावत् पालन कराइये और मेरा लोक और परलोक सुधारिये-

स०-हे जगदीश्वर परमात्मा! मेरी भी यही विनयहै कि मेरी प्रतिज्ञाओंका निर्वाह भली भांति हो और हमको सदैव परस्पर प्रेमपूर्वक आनन्दमें रखिये-

द्यु०-हे मेरे पुत्र पुत्री! तुमने यह जो प्रण कियेहैं

सदैव मन वचन और कायासे इनका पालन करना क्योंकि जीवनका महान् सुख तथा लोक और परलोक की सिद्धि केवल सत्यसे ही प्राप्त होतीहै–

अ०–मैं प्रथम महाराज नारदजीका गुणानुवाद कहताहूं कि जिनकी कृपासे मैंने अपनी पुत्रीके लिये योग्य वरपाया और फिर महाराज द्रुमतसेनको धन्यवाद देताहूं कि जिन्होंने मेरी विनयपूर्वक प्रार्थनाको स्वीकार करके मेरी पुत्रीको अपने सर्व गुण सम्पन्न पुत्र सत्यवानकी सेवामें स्वीकार किया और मुझे कृत कृत्य करके अपना दासानुदास बनाया, ( सत्यवान और सावित्रीसे ) हे पुत्र और पुत्री ! मैं इस स्थानमें तुम दोनोंको आशीर्वाद करके ईश्वरसे प्रार्थना करताहूं कि तुम एक दूसरेके सहायक होकर जन्म जन्म सुख भोगो–

ब्रा०–( दोनोंसे ) उठकर आप दोनों अग्निकी परिक्रमा दीजिये–

स०–और सा०–बहुतअच्छा महाराज ( उठकर खडे होते हैं )

स०–( सावित्रीसे )

दो०–प्यारी पहलो पगधरौ, अग्नि परिक्रमा देव।
द्रववस्तू जोमैं पियों, भाग तुम्हारो लेव ॥ १ ॥

सा०–( प्रथम परिक्रमा देतीहै )

स०–( चौ० )–पगदूजो धर भागीहूजै।
भोजनार्थ सब वस्तूलीजै ॥

सा०–( दूसरी परिक्रमा देतीहै )

स०–( चौ० )–तृतिया पग तुम धरहु सयानी।
सम्पदादि बिच भागी जानी ॥

सा०– ( तीसरी परिक्रमा देती है )

स०–( चौ० )–पग चौथेको अर्थ यही है।
कुशल क्षेम तुम मोरि चही है॥

सा०–( चौथी परिक्रमा देती है )

स०–( चौ० )–धरपग पंचम लाभ उठावो।
गऊ आदि जो ममगृह पावो॥

सा०–( पांचवीं परिक्रमा देती है )

स०–( चौ० )–प्रिये परान छठौं पग धरिये।
मम सहाय आपदि बिच करिये॥

सा०–( छठीं परिक्रमा देती है )

स०–दो०–पग सप्तम प्यारी धरौ मित्र हमारी थाव।
रहौ सहायी विपतिमें सांची प्रीति निभाव॥

सा०–सातवीं परिक्रमा लेकर खड़ी होजाती है–

स०–हे सुन्दरी! तुम्हारा हाथ मैंने पकड़ा अब तुम मेरी स्त्री होकर रहो, मैं आकाशहूं तो तुम पृथ्वीहो, जब पानी दूधमें मिलता है तो उसको भी अपनीही सूरतका करता जाता है इतना कि जब बहुत पानी उसमें मिल जाताहै तो दूध न जाने क्या होजाता है यही गति मेरे और तुम्हारे मनकीहो–

सा०–मेरी यही इच्छा है–

दो०–प्राणनाथ पद आपके जिन छाँडौं दिन रैन।
पृथिवी ध्रुव भौंचाल सह तजै न केतू नैन॥

चौ०–निशि दिन सेवों चरण तुम्हारे।
बिसरावों जिन सुधि तुम प्यारे॥

अब विशेष क्या कहूं मैं तो आपकी होचुकी नदी समुद्रमेंमिलकर समुद्रहीकहाती है–

ना०-ईश्वर परमात्मा भलीभांति तुम्हारे वचनोंका निर्वाह करायें-

ऋषि समूह-(द्रुमतसेन से) धन्य है राजा तू धन्य है तेरा बड़ाभाग्य है जो सावित्री समान पतोहू तुझे मिली

द्रु०-इसविपदावस्थामें हमारा क्या धन्य है यह भी आपका अनुग्रह और सावित्रीके गुणका प्रताप है कि जो आज हमारे ऊपर धन्यवादोंकी वृष्टि होरहीहै-

अ०-( सावित्रीसे ) पुत्री ! इस सघनवनमें घबड़ाना नहीं और अपनेपति और सास श्वसुरकी यथायोग्य सेवा करती रहना ( सत्यवानसे )बेटा ! तुमसे मेरा इतनाही कहना है कि अब यह अबला तुम्हारी अर्धांगी हुई प्रसन्नतापूर्वक दिन व्यतीत करते रहना-

सा०-हे पिताजी! कुमोदिनी कैसेही अपवित्र स्थानमें हो परंतु जब उसे चंद्रमाका दर्शन मिल जाता है तो खिलतीही है-

स०-इसी भांति कमल कैसाही जलके झकोरोंसे पीडितहो परंतु सूर्य किरणको देखकर विकसताही है-

अ०-( द्रुमतसेनसे ) अबमुझे आज्ञादीजिये यह कन्या आपकी पुत्रवधू हुई-

द्रु०-राजन् ! आपकी पुत्रीकामन इस वनमें कठिनतासे लगेगा-

अ०-इन दोनोंकी परस्पर प्रीति ऐसी है कि बनके कांटे इसे गुलाबकी कलियोंसेभी अधिक कोमल जान पड़ेंगे अब मेरा नमस्कार लीजिये-

शैल्या-( अश्वपतीसे ) हे सज्जन ! आपका आदर

सत्कार हम अभागोंसे नहीं बनपड़ा जिसकी हम आपसे क्षमा माँगती हैं-

अ०-सज्जनोंका प्रिय बोलनाही सबसे बड़ा आदर सत्कार है-

द्यु०-भूपकी सदा जय हो (नारदजीसे) महाराज मैं दण्डवत करता हूं (दोनोंसे) मैं आपदोनोंसे विनय पूर्वक प्रार्थना करताहूं कि कभी फिरभी दर्शन दीजियेगा और इस आपतिकाल में अपनी पुत्रीकी सुधि लीजियेगा-

अ०-जो वस्तु सज्जनोंको सौंपी जाती है उसकी सुधि लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं रहती वे उसे आदर भावसेही रखते हैं-

ना०-(द्युमतसेनसे) आपकी तपस्या सफल हो (सत्यवान और सावित्रीसे) तुमको हमारा यही आशीर्वाद है-

सो०-धनयोवनधनरूप धनधनभागसुहागतुम ।
तुम दोनों सद्रूप चिरंजीव जोड़ी अचल ॥

सा०-ईश्वर करै आपका आशीर्वाद हमारा सहायीरहै-

अ०-(सावित्रीसे) (आखौंमें आंशू भरकर) इस अगम्य जंगलमें कैसे कांटों के अपर चलसकेगी अबमैं जाता हूं कुशलसे रहना-

सा०-(नेत्र डबडबाकर) पिताजी आप कुछ चिंता न करैं ईश्वर सब भला करैगा, अपने स्वामीकी दया है तो कोईभी कुछनहीं करसकता आप पधारिये माताजीसे मेरा प्रणाम कहि दीजियेगा (रोती है)

अ०-( सावित्रीको छातीसे लगाकर ) बेटी ! धैर्य धर जो तेरी प्रारब्धमेंथा-हुआ और होगा अबमैं जाताहूं-

( अश्वपती नारदजी ब्राह्मण और दूसरे ऋषी आदिक जाते हैं )

द्यु०-( शैल्यासे ) दुःख सुखतो कर्मानुसार होतेही हैं परंतु उस दीनबंधु दीनानाथ परमहितकारी जगदीश्वरको धन्यवाद है कि जो ऐसेसमयमें भी दयाकरके हमारी सहायकरता और घरबैठे इच्छा पूरण करताहै-

सा०-(सत्यवानसे) हे स्वामिन्! मैंने तो जानाथा कि आपको मेरा स्मर्णभी न रहा होगा-

स०-प्रिये बृक्षकी साया कितनीहीं दूरजावै परंतु वह अपनी जड़ नहीं छोडती-

सा०-( आपही आप ) सास श्वसुर और भर्ता सर्व ने बकलेकेवस्त्र धारण कर रक्खे हैं अब मुझेभी यही उचित है कि पतिगृहके वस्त्र धारण करलूं ( अपने वस्त्र उतार बकलेके पहरती है )

स०-प्रिये! यह क्या करतीहो तुम्हारा कोमल अंग इनको कैसे सह सकैगा यह तो हमसरीके वनवासियोंके पहरने योग्य हैं-

सा०-मुझे भी तो वनवासी बनना है-

द्यु०-बेटी ! क्यों अपने शरीरको कष्टमें डालती है तेरे पिताके वस्त्र जबतक तेरेपास हैं तबतक तो इन्हें पहर फिर ईश्वर परमात्मा सर्वका पालन पोषणादि करनेवाला औरदेगा हमतो अभागे पुरुष हैं हममें क्यों मिलती है-

सा०-महाराज! स्त्रीको उचित है कि चाहेवह कैसे ही प्रतिष्ठित कुलकी क्यों नहो पतिके घरमें आवे जब

वैसेही वस्त्रादिक धारणकरै कि जैसे उसकेसास श्वसुर और पत्ति आदिक पहरते हों उनकी अपेक्षासे अधिक रहना योग्यनहीं ( अपने वस्त्रादिकको जलाती है )–

स०–( सावित्रीको बकलेके वस्त्र धारण किये हुए देखकर आपही आप ) किसी कविने सत्य कहा है कमलके फूलपर काईभी शोभा देती है और पूर्ण चंद्रमामें काली रेखाभी खुलती है ऐसेही इस पद्मनाका अंगभी बकला धारण करनेसे शोभायमान दीख पड़ता है सच है रूपवतीको सबही सोहता है कस्तूरी क्या डिवियामें छिपसकती है–

द्यु०–( सत्यवानसे ) बेटा ! भार्या पुरुषका आधा अंग है–परममित्र है और धर्म अर्थ काम इन तीनोंका मूल है स्त्री सहित होनेसेही आदमी कृपावन्त और श्रीवन्त होता है और आत्मासे आत्माही पुत्र उत्पन्न होता है इस कारण पुरुषको योग्य है कि अपनी स्त्रीका अपमान और अनादर न करै स्त्रीतो तुझे भाग्यसेही मिली है हमारी तो इस समय यह दशा है कि भोजनको पटेभर फलफूलभी नहीं मिलते तुझको यह महाप्रतापी राजा अश्वपती की कन्या कल्याणकारी और लाभ दायक हो यथाशक्ति दुखी मतकरना जो मनुष्य पतिव्रता स्त्रीका अनादर करता है वह इसलोक में दरिद्र रोग आदि अनेक आपत्तियोंसे क्लेशित रहता है और परलोकमें नानाप्रकार के दुःख सहता है अबलाको कभी दुखी न रखनाचाहिये स्त्री माता पिताओं से अलग होकर तो पतिके पास रहना ग्रहणकरती है और उसके माता पिता सदा जीतेनहीं उस बिचारीको तो

सिवाय अपनेपति के और कोई सहायक नहीं दीखता यदि वहभी उसे दुखदे तौ फिर तो उसका जीवन मरण तुल्य हो ही जाता है सज्जनलोग परस्पर प्रीतिमें आनंदपूर्वक दिन व्यतीत करते हैं और सुशीला और पतिव्रता स्त्रियांभी उनकी सेवा तन मनसे करती हैं--

स०-पिताजी ! ऐसा कौन मूरख है कि जो मुक्ता मणिको पाकर पत्थरसे फोड़ै परंतु क्या करूं अँगूठीभी नहीं कि जिसमें जडकर रखलूं-

द्यु०-बेटा यह तेरा भाग्य है-

शै०-( सत्यवान और सावित्रीसे ) अबतुम अपने आनन्दसे रहौ और ईश्वरका ध्यान करतेरहौ वह सर्व शक्तिमान्है-

( सब जातेहैं )

## अंक ३

### प्रथम गर्भांक।

( स्थान द्युमतसेनके आश्रमके निकट )

( एक कुंज )

( सावित्री फूल चुनतीहुई आतीहै )

सा०—( आपहीआप ) हे ! हैं ! आज यह क्या अश-कुन होरहेहैं मेरी बाई भुजा क्यों फडकतीहै कलेजा क्यों कांपताहै चित्त क्यों घबडाताहै अरे ! आज यह क्या होरहाहै प्रातःकालही सूर्यकी ओर मुखकरके सियार रोतेहैं, दिवसमें आकाशसे तारे टूटते दिखाई देतेहैं बारबार मेरे नेत्रोंके आगे अंधकार आजाताहै सूर्यका प्रकाश कम दिखाईदेताहै नदी नालोंका जल उलटा बहता हुआ पृथ्वी कांपतीहुई और बिजली गिरती हुई देखपड़तीहै ( ऊपरको देखकर ) हां याद आताहै कि रात्रिको उल्लूकभी ऊंचे वृक्षोंको छोड़ हमारीही नीची कुटीपर आकर बैठाथा ( फिर पृथ्वीकी ओर देखतीहुई ) पशुपक्षी अपना दानापानी छोड़ और बछडे अपनी माताके स्थानोंसे मुखमोड़ और महात्मालोग अपना हरभजन त्याग मेरी ओर बड़ी करुणासे निहार रहेहैं, अरी ! मृगमाला तू बारबार मेरा मार्ग क्यों का-टतीहै, हे भगवन् ! आज इन अशकुनोंका क्या अशुभ फल मुझे होनाहै, हेदेव ! यह क्या मायाहै ( कुछ सोच-कर ) नारदजी महाराजने कहाथा कि आजसे एक सम्बत्सर व्यतीतहुए सत्यवानकी मृत्यु होगी गिनतो लों कहीं आज वही दिवस तो नहींहै ( गिनती करती है चौंककर ) हायरेहाय ! यह क्या हुआ क्यों न अशकुन

हों एक वर्षको व्यतीतहोते तो कुछभी काल न लगा वह दुष्ट दिवस तो आजहीहै अभी सूर्यनारायणने अपना प्रकाश भलीभांति नहीं दिखलायाहै ( घबराकर ) हाय! अब क्याकरूं ( रोतीहुई ) हे ब्राह्म दिवाकर! आपके साथ मेरे सुहागभागका नाश होगा, हे सूर्यदेव! आपही सर्वजगत् के जीवनमूल हैं यह आपही के तेजका प्रतापहै कि जीवमात्रके प्राण उनके देहोंमें विद्यमानहैं आपही हमारे नेत्रोंको जोति देनेवालेहैं यदि आप इस पृथ्वीसे बहुत दूरहैं तबभी अपनी प्रजाका पालन पोषनादि करतेहैं, हे सर्वशक्तिमान् जगदात्मा! आप सबपर एकसा दयाभाव और समदृष्टी रखतेहैं मेरी विनयपूर्वक प्रार्थनाको स्वीकारकरके आज अपनी बाल्यावस्थाही रखिये (कुछ सोचकर) हाय! मैं यह क्या बावली बातें कररही हूं मैंतो इससमय महाराजके पूजनार्थ पुष्प लेने आईथी यहां बहुतसमय होगया सूर्यदेव पृथ्वीतलको छोड़ दोहस्त ऊपर चढगये अब जल्दी चलना चाहिये ( पुष्प तोड़तीहुई ) हायरे! हाय आज मैं किस बिपतसागरमें डूबीजाती हूं पिताजीने तो पहिलेही बहुत वर्जाथा ( सोचकर ) हैं! हैं! इससमय मेरी बुद्धि कहां चलीगई मेरे मुखसे यह क्या निकलगया चित्त बड़ा चंचलहै—

( नैपथ्यमें )

पिताजी! आज्ञाहो तो वनमें जाकर भोजनार्थ कुछ फलपात और तापनेके लिये कुछ काष्ठादिक लेआऊं—

सा०—( कानलगाकर ) हैं! यह क्या प्राणनाथ फलादिक लेने वनमें जातेहैं!—

( नैपथ्यमें )

अच्छा बेटा जाओ।

सा०–हाशोक! हाशोक! महाराजने भी आज्ञा देदी (ऊंचेस्वरसे) हेस्वामी! कहां जातेहो आज मैं भी बनकी सैरको आपकेसंग चलूंगी ( दौड़तीहुई ) यह आई! यह आई! कुछ बिलंब कीजिये–

( स्थान द्युमतसैनका आश्रम )

स०–( सावित्रीको देखकर ) हे प्राणप्यारी! वनके झाडझंकारमें तुम्हारे कोमलपद कैसे चलसकेंगे बड़ा कष्ट होगा–

सा०–आपके संगमें कांटे मेरा क्या करसकतेहैं–

स०–हे प्रिये! वनमें चलनेसे तेरे कोमलशरीर को केवल दुखही होगा–

सा०–आपकेबिना स्वर्गमेंभी सुख नहीं, हे प्राणनाथ! स्त्रीका धर्म है कि यथाशक्ति अपने पतिकी सहायता करै स्त्रीको अपने मातापिता पुत्र बंधु अथवा मित्र किसीसे सहायताकी आशा न करनीचाहिये केवल अपने पतिका ही भरोसारक्खे आज मैं आपकेसाथ अवश्य चलूंगी और आगे आगे चलकर मार्गमेंसे कांटे हटाती चलूंगी अपने चित्तसे शंकाका लेश दूरकरो आपकेलिये वाट सरल करती जाऊंगी मुझे अपनेसाथ चलनेकी आज्ञादीजिये आपकी चरणसेवामें ही मेरी अत्यंत प्रसन्नताहै आजतक यह दासी आपकी आज्ञासे यथाशक्ति बाहर नहीं हुई आज मेरीभी एक प्रार्थना स्वीकार करलीजिये सिंह भालू आदिसे मुझे किंचित मात्रभी भय नहीं और भय क्योंहो पुरुषके संगमें स्त्रीके भयका कामही क्याहै स्त्रीके संग होनेसे पथिकको बिश्रामही मिलताहै–

स०-अहो शीलस्वभाव श्रेष्ठकुलकी कन्या! मेरे वचनोंको कान लगाकर सुनो और ध्यान दो यह अखंड वन दुःखोंका भरा सिंहका भिटा और सर्पोंका विलाहै प्रिये! मुझेही जाने दो इस बनमें जहां मार्ग जांन नहीं पड़ता तुम कहां जाओगी–

सा०-हे प्रियवर! आपके संगमें सर्व दुःख सुखके हेतु होजावेंगे सिंह भालू आदि प्रिय सत्यवान का मुख देखतेही छू करजावेंगे वनके जंतुओंकी तो क्या गिनती है प्रियतम निकट होनेसे इंद्रभी कि जिसके आधीन पवन वर्षा और विजली आदि हैं मेरा बाल बांका नहीं कर सकता आपके संग रहना ही मेरी आत्मशुद्धि का हेतु है स्त्री का ईश्वर पति है भला आपही कहिये कि इन चरणोंमें कुछ दुःख है? और उनको कोई छोडना चाहता है? मेरा आपके निकट रहना है वही स्वर्गवास है और विना आपके वही नरकवास हो जाता है (आंसू डब डबाकर पैरों पर गिरती हुई) हे स्वामी! क्या अपनी प्यारी भार्याको स्वर्ग छोड नरकमें रखना चाहते हो–

स०-(सावित्रीकी बांह पकड़कर उठाता हुआ) हैं! हैं! प्रिये यह क्या करती हो उठौ! उठौ! बेग उठौ ऐसा कौन है कि जो मेरी प्राणप्यारी को मुझसे अलग रक्खे विधाताने तुम्हारी मोहनीमूर्ति को मेरेही दुःख निवारणके हेतु रचा है सज्जन मनुष्य दयाके छोडनेमें असमर्थ होते हैं ऐसेही इस समयमें भी तुम्हारे यहां छोड़नेमें असमर्थ हूं पिताजीकी आज्ञा ले लो और चलो तुम को आज बनका भ्रमण करा लाऊं॥

सा०-(द्युमत्सेन से) महाराज! जबसे मैं यहां

आई हूं इस बनको नहीं देखा आज्ञा हो तो आज राज कुवँरके संग जाकर बनकी विचित्रता देख आऊं

द्यु०-बेटी तेरा अंग कोमल है इतनी सामर्थ्य कहां है कि बनमें फिरस कै-

सा०-( हाथ जोडकर ) महाराज! अपने स्वामी के संगमें यदि मैं असमर्थ हूं तब भी सामर्थ्यवान हो जाऊंगी-

द्यु०-इतने दिवस पीछे आज तैंने यह एक प्रार्थना की है इस कारणमैं भी आज्ञा देता हूं जा ( सत्यवानसे ) बेटा ! आज सावित्री तेरे साथ बनको जाती है बहुत काल न लगाना शीघ्रही लौट आना।

स०-जो आज्ञा महाराज की-

सा०-महाराज! अपनी पुत्रवधू को अवैधव्य का आशीर्वाद दीजिये-

द्यु०-बेटी आज क्या है-

सा०-कुछ नहीं महाराज बड़ोंका आशीर्वाद सदा ही लाभ दायक होता है-

द्यु०- सोरठा

अपने पतिके साथ कर विहार निशिदिन रहसि।
गहकर हमरो हाथ तू मुझ आंधा लाकडी।

( दोनों जाते हैं )

( स्थान सघन वन )

सा०-( सत्यवानकी ओर देखकर आपही आप ) क्या इस मोहनीमूर्त्ति की आयु आज ही पूर्ण हो जायगी हाय ! यह उमडतेसरोवर का कमल, यह इस बन रूपी आकाश का चंद्रमा आज ही नष्ट हो जावेगा सुख के दिवस तो दामिनी कीसी झलक दि-

खाकर झटही निकलगये आजका दिन कैसा वज्र हो गया है कुल्हाडोंसे भी काटा नहीं कटता, हे जगदीश ! पहिले मुझहीको इस पृथ्वीसे उठाले, हे पृथ्वी, कुछ तूही अवकाश दे क्यों ऐसी कठोर होरहीहै, हे वज्रदेव मेरी बिनती तुमहीं सुनौ और कुछ सहायता करौ, अरे मेरे नेत्रोंकी पुतली, अरे मेरे प्राणोंके प्यारे ! मृत्यूके सन्मुख कहां चले जातेहौ, हे पृथ्वी! क्या आज तू सत्यवान सरीके सत्पुरुषसे विदा होगी, आ पहिले मुझसे तो मिलले, हायरे! हाय ! यह तो चलाही जाताहै ( रोकना चाहतीहै कुछ सोचकर ) हैं! मैं यह क्या करतीहूं, रोकनेसे क्या होगा (ठिठक-कर ) किसी असाध्य रोगीसे यदि उसका वैद कहदे कि तू अवश्यमरैगा तो बीमारीकी अवधिसे भी पहि-लेही उसके प्राण निकलजावेंगे-

स०-प्रिये! किस शोचमेंहो, वे देखौ मोर अपने चित्र विचित्रक रंगोंके परोंको फैलाकर कैसा नृत्य कररहेहैं, अहा! इन पंखोंका समूह तो इंद्रासनकोभी लज्जितकर रहाहै, पुष्पक्यारियों के बीचमें होकर जो नदी बह रहीहै वह कैसी शोभायमान दीखपडतीहै मानो तारागणोंके बीच शिशुमारचक्र आगयाहै-

सा०-(आपही आप) इस नदी में मैंही डूबकर मर-जाऊं ( जाना चाहतीहै सोचकर रुक जातीहै ) सत्यहै आपत्तिकाल में मनुष्यकी बुद्धि ठीक नहीं रहती मुझे इतनाभी ज्ञान नहीं कि आत्मघात करना बड़ा पापहै आगे मैं क्या करूंगी (क्यारियोंकी ओर देखकर प्रगट) मैंने तो इस शोभाको आजही देखाहै, क्या सुन्दर पुष्प खिलेहैं-

स०-हे कमलनयनी! इस नदी में तुम्हारी बहुत सीबतें मिलतीहैं-

दोहा-रूप नदी त्रिवली तरँग, नाभी भ्रमर कराल।
चक्रवाक कुच वैदिशा, माछी चक्षु विशाल॥

हे जलचरपक्षियो इतना अभिमान क्यों करतेहो किलोल करनेके लिये नदी तुम्हारेही पास नहीं तुमसे अधिक एक सरिता मेरेपासभीहै-

सा०-( आपही आप) हाय यही रसभरे तीर तोवेधे डालतेहैं, कल इन कोकिलवत् मृदुवैनौंको किससे सुनूंगी-

स०-देखो प्रिये! यह सब वृक्ष शर्दी गर्मी व वर्षाका दुःख अपने ऊपर उठातेहैं और सदैव एकपाद से खडे रहतेहैं अपनी साया फल व फूलोंसे सर्वजीवों को यथा-शक्ति सुखदेते हैं जो कोई इनके निकट आताहै विमुख नहीं जाता कुछ न कुछ लाभ उठाताहीहै-मनुष्य इतना सुख पानेपरभी इनके डाल पात आदिको सताते हैं तोभी यह बुरा नहीं मानतेहैं-फल फूलादि होनेके समय यथाशक्ति बटोहियोंका सनमान करतेहीहैं, अब बसंतऋतु आगईहै यह वृक्ष फल फूल न रहनेके कारण कैसे झुकेहैं मानों शिरनवाकर विनती करतेहैं कि हमसे तुम्हारी कुछ सेवा नहीं बनपडी इस लिये हम बडे लज्जितहैं क्षमाकरना अपनी प्रीति धन पात्र और कंगालोंसे एकसी रखते हैं, और योगीश्वरों के समान तप करते हैं, हे चन्द्रमुखी! शशिवदनी! तनक इधर तो देखौ फुलवाडीके बीचनदमें कुमुद और कमलोंमें जलपक्षी कैसे किलोल कर रहे हैं, आओ प्रिये आगे चलें ( कुछ चलकर ) देखौ यह बन कैसा सु-

गंधित हो रहा है इसमें एक चन्दनका वृक्ष है, सो और वृक्षभी उसीकीसी सुगन्ध दे रहे हैं ऐसेही सज्जन मनुष्यकी संगति में कुटिलभी बुद्धिमान और चतुर हो जाते हैं, यहां तो सर्प बहुत फिर रहे हैं इनसे सावधान रहना, आओ यहांसे उस पर्वतकी कन्दराके निकट चलौ ( कुछ चलकर ) यह स्थान कैसा रमणीक है झिरनोंसे अमृतसमान जल वर्ष रहा है और हेम मन्द सुगन्ध तीन प्रकारकी सुखदायी पवन चल रही है वृक्षों के तले विश्राम देनेवाली सुन्दर शिलायें बिछी हुई हैं इसी झिरनेका पानी उन छोटे छोटे सरोवरों में जाकर इकट्ठा होता है और वहांसे नदीरूप होकर बहता है भांति भांतिके पक्षी कमलोंके ऊपर कैसे गुंजार कर रहे हैं यहां नीलकंठ कोकिला तोता पपहिया चक्रवाक चकोर भांति भांतिकी कैसी मधुर धुनि कर रहे हैं कि, जिनके सुननेसे चित्तको बड़ा आनन्द प्राप्त होता है ऐसेही मनुष्यको उचित है कि मीठे वचन बोलकर सबके चित्तको लुभावे चलौ और आगे चलें ( पर्वतके निकट जाकर ) प्रिये !आज बहुत दूर आये हैं देखो इस वृक्षकी छाया कैसी उत्तम है कुछ विश्राम लेलें ( दोनों बैठते हैं ) यहां आसपास वृक्षोंके तले जो फूल फलादि टूटे पड़े हैं इन्हें तुम इकट्ठा करौ मैं उस वृक्षसे लकड़ी काट लाता हूं-

सा०-( प्रत्यक्षमें प्रसन्नमुख होकर ) जो आज्ञा ( फूल चुनती और आंसू बहाती जाती है ) क्या आशीर्वादभी कुछ फलदायी न होगा-

स०-( आपहीआप ) फल चुननेके परिश्रमसे प्यारी के मुखपर पसीना निकलकर बिथरेहुए बालोंमें कैसी

उत्तम शोभा दिखा रहा है मानौं काले काले सर्प ओस की बिन्दु चाटने आये हैं ( फरसा उठाकर ) मैंभी लकड़ी काटलूं(काटता हुआ पसीनोंसे व्याकुल होकर) प्रिये ! बेग यहां आओ मुझे सँभालो–

सा०–( घबड़ाकर ) आई! आई !! यह आई!!! ( निकट आकर और सत्यवानके गलेमें हाथ डालकर ) हे स्वामी अभीतो आप भले चंगेथे एक क्षणभर मेंही यह क्या दशा होगई–

स०–हे कमलनैनी ! इस समय मेरे माथे में त्रिशूलसे लगते हैं अंग शिथिल होता जाता है चित्त घबड़ाता है और देह अत्यंत असमर्थ जान पडती है, प्राण प्यारी ! अबमुझे निद्रा आतीहै कुछ विश्रामकरनेको जी चाहता है–

सा०–( बैठकर ) आइये मेरीजंघापर शिर धरकर विश्राम कीजिये–

स०–अच्छा प्रिये ! ( लेट जाता है ) हे प्राणप्यारी ( निद्रा आती है )–

### द्वितीय गर्भांक।

( स्थान द्रुमतसेन का आश्रम )

( द्रुमतसेन और शैल्या आते हैं )

द्रु०–देखो आज सत्यवानने कितनी देर लगाई है अभी तक नहीं लौटा–

शै०–महाराज पश्चिमदिशा सूर्यको ग्रसने और लालीको छोड़ने लगी न जाने क्या कारण है किसत्य-वान और सावित्री अभी तक नहीं लौटे आज तो बहुतही विलंब हुआ आपकी संध्याका समय भी आन पहुंचा–

द्यु०-कुछ बाट और देखलें जबतलक मैं संध्याकरलूं इतने कालमें भी न आये तो फिर हेरेंगे एक आपत्तिमें पड़ेहीहैं दूसरी यह क्या आगई सत्य है " खोटे दिवस आते हैं जब अनेक विघ्न होते हैं " ( संध्या करता है )-

शै०-( कुछ ठहरकर ) आज तो कुछ कुशल नहीं जानपड़ती मेरी दाईं आंख फडकती है, हे दैव! आपकी क्या इच्छा है ( ऊंचे स्वरसे ) अरे बेटा तुमने कहां विलंब लगाया तुम्हारे भोजनार्थ अनेक फल फूल इत्यादि यहीं रक्खे हैं तुम वहां क्यों गये जल्दी आनकर भोजनकरौ, हे पुत्र ! तेरेबिना हमारा जीवन दुर्लभ है इतनाकाल तो तुम कभी न लगाते थे मुझे निश्चयहै कि आज किसी राक्षसके फन्देमें पडे हौ ( रोती हुई ) अब हम वृद्धहुए धनगया राज्य गया केवल तुमहीं को देखकर अपने नेत्र संतुष्ट कर लेते हैं, हे लाल अब तुमभी हमें छोडकर कहाँ चलेगये, अरे कोई नहीं बोलता ( द्युनतसेन से ) महाराज ! वे तौ नहीं आये हाय आज यह क्या होगया हम तो पहले ही अघोर दुःख में पड़े हैं हे परमेश्वर ! तैंने यह क्या दुःखदिया इससे तौ प्राणोंको ही हरलेता ( पुकारकर ) बेटा ! आज किसक्षेत्रमें चमत्कार करने चलेगये हो अरे कहीं आस पास बनमें हो तो बोलौ अरे! बोलते क्यों नहीं देखौ तुम्हारी मा कबसे पुकार रही है अरेः तुम तो तनक पुकारनेपर झट उत्तर देते थे आज क्यों ऐसा कठोरहृदय करलिया हाय ! हाय ! कोई नहीं बोलता, सावित्री ! तू ही कुछ उत्तर दे सावित्री ! सावित्री ! कहां है अरे वह काहे को बोलेगी भार्या तो उसीकी है-

द्यु०-अबरुदन करनेसे क्या होगा कुछ उपाय करना चाहिये आओ चल कर हेरैं-

शै०-महाराज ! अन्धकार होता आता है आप कहां चलते हैं मुझेही जाने दीजिये-

द्यु०-मुझेतो सदैवही अन्धकार है अपने उजाले को ही ढूंढने चलता हूं-

शै०-( रोती हुई ) चलिये तो महाराज ( चलती हुई ) हा दीनबंधु दीनानाथ ! हा जगदीश्वर ! जिस पापीके शापसे हमको आज यह दुःख प्राप्त हुआ उससे बदला लेनेवाले आपही हैं-

द्यु०-यह क्या कहती हो कोई किसी को दुःख नहीं देता दुःख और सुख तो अपने कर्मोंका फल है, आज यह क्या संकट हमारे ऊपर आया है, हे पुत्र सबेरे तो तुम फरसा हाथमें लेकर आये थे अब ऐसे कहां छिपगये कुछभी नहीं सुनते ( रोता है )

शै०-अरे बेटा मैं नहीं जानती कि तुम्हारी क्या दशा है किसी व्याघ्र अथवा भालूने तो नहीं सताया अरे कोई सर्प तो नहीं डसगया, हे पृथ्वी तैंनेही तो मेरेबेटेको नहीं चुरालिया ( द्युमतसेनसे ) महाराज आपकी गोदका खिलायाहुआ न जाने कहां कांटोंपर सोताहै सो बोलता नहीं ( दहाड मारकर ) अरे बेटा सत्यवान !

द्यु०-अरे बेटा ! कहांहो,- हे राजकन्या सावित्री !-

शै०महाराज! यहां सावित्रीहै कहां जिसे आप पुकारते हैं-

द्यु०-हाय ! क्या बेटीभी नहींआई, अरी बेटी तेरे पिताने तो चलती समयपर कहाथा कि अपने सास श्वशुर

कोप्रसन्न रखियो आज हमारा जलताहुआ कलेजा क्यों नहीं ठंढाकरती–

शै०–हाय कैसी भई! हमें रोती छोड़ कहां चलेगये (रोतीहै) अरे बेटा! राज्य हमारा वैरियोंने छीन लिया और हमें देशसे निकालदिया अब तुम भी छोड़कर कहां चलेगये अरे बेटा नेक उत्तर तो दो देखो तुम्हारी मा कबसे पुकाररही है–

( नैपथ्यमें )

हे मित्र धर्मराज आज कहां जातेहो आज यह फांस स्वयम् हाथमें काहेको लियाहै–

( दूसरा शब्द नैपथ्यमें )

द्युमतसेनका पुत्र सत्यवान बडा धार्मिक और गुणवानहै आज उसकी आयु पूरणहुई इस फांस में उसका जीव लेने जाताहूं–

द्युमतसेन और शैल्या–हें.! हें.! ( घबड़ाकर ) यह क्या आपत्तिहै ( रोतेहुए ) यह आकाशसे कैसा शब्द हुआ.!

द्यु०–( ऊंचे स्वरसे ) महाराज तनकठहरिये मुझेभी लेते चलिये ( रोकर ) अजी.! इतना तो बतलादीजिये कि मेरा बेटा कहांहै–एक बेर सूरत तो देखलूं ( कुछ उत्तर न पाकर ) बेटा.! कहीं सोतेहोतो जागो दुष्ट तुम्हारा प्राण लेने आता है–

शैल्या–( रोकर ) हाय यह पापी तो चला ( ऊंचेस्वरसे ) अरे बेटा.! उठो, यह समय सोनेका नहींहै,!हालाल.! हा मेरे आंखोंके तारे. कहां चलेगये तुम तो फलफूलादि लेने आयेथे अरे मेरे बेटा तुम्हें कौन उठालेगया (.द्युमतसेन से ) महाराज.! अब तक क्या उस दुष्ट प्राण-

घातकने तुम्हारे बेटेमें कुछछोड़ा होगा नहीं नहीं कदापि नहीं( दहाड मारकर ) अरे बेटा अपने अंधे बापको तो आकर सन्तोष दो, हे निर्दयी यमराज.! मेराही प्राण लेना बच्चोंपर घात करनेसे शूरवीरता प्रसिद्ध नहीं होती, एक वह दिनथा कि सत्यवानका जन्मोत्सव हुआ और सुंदर शय्यापर सुलायागया आज वही तुम्हारा पुत्र न जाने कहां कांटोंपर सोताहै हाय क्या यह दिनभी इस वृद्धावस्थामें देखना था–

दोहा–हाय दई कैसी भई, बेटा तुम कहकीन।
मात पिताको छांड़िकै, चहो स्वर्गसुख लीन ॥

द्यु०–अरे यह क्याहै.! तुम कहां हो.! अपने अन्धे पितापर तनकभी दया नहीं करते. हा.! मम विपत्ति अवलंब! हा! ममप्राण अधार! अरे तुमने तो संसारी सुख भी कुछ नहीं देखा, मैं बड़ा मंदभागीहूं इस अवस्था में यह शोक देखताहूं, हाय अबमैं किसे बेटा कहूंगा ( पछाडखाकर पृथ्वीपर गिरता है ) अरी बेटी अपने प्राणपति से भलीभांति मिलले यह उसका अन्त समय है विदा होले–

शै०–( रोती हुई ) महाराज! उठो कहीं मिल जाय तो बेटेका मृतकदेह तो देखलो, सावित्री भी न जाने कहां चलीगई ( नैपथ्यकी ओर पुकारकर ) अरी! सावत्रीहो! सावत्री, सावत्री! ( द्युमतसेनसे ) महाराज! यहांतो कहीं भी नहीं बोलती, ( रोती है ) हाय! बेटा मैंअब किसका मुख देखकर जीऊंगी अरे मेरे अँधेरे घरका दीपक किसने बुझा दिया! अरी बेटी! तूही आकर सन्तोषदे अरी! इतना तो कहजा कि

तेरा प्राणपति कि, जिसे तू कभी पृथक् न होनेदेतीथी अब कहां है-

द्यु०-बेटी! क्या इसभयसे कहीं लुकरही है कि, पतिको खोकर क्या मुखदिखलाऊं ( रोती है ) हा बेटा! हा! लाल! इतना तो कहजाओ कि, तुम्हारी अचानक मृत्यु कहांसे आगई, हे सर्व-अन्तरयामी जगदीश्वर! यह क्या भेद है, हमसे ऐसा कौन अपराध बनपड़ा, महाराज अश्वपती! आपने तो हमारा भरोसा करके अपनी कन्या सौंपीथी अब आपको क्या उत्तर दूंगा मुझेतो विश्वास पड़ता है कि उसने पतिवियोगमें अपना शरीर अवश्यही त्याग दिया होगा कदापि नहीं भी त्यागा तो वहदीन अबला विधवा अवस्थाका दुःख कैसे सहेगी बेटी! तैने मुझसे अवैधव्यका आशीर्वाद लिया इससे निश्चय होता है कि अपने पतिकी मृत्यु तुझे पहिलेसे मालूमथी, हाय! तैने मुझसे भी छिपाया, हायरे! हाय! यह क्या विपत्तिधारा बरसरही है, हे पुत्र शोकसे दुःखित शैल्या! अपने बेटेकी चिताके लिये कुछ लकडियाँतो चुनले, अरे! ज्योतिषी तो कहतेथे कि तुम्हारा बेटा बडा प्रतापी राजाहोगा क्या सबपोथी पत्रे धूलमें पड़े-

दो०-बेटा! तुम कहँ जातहो अंध कूपके माहिं।
पिता तुम्हारो धर्म है, हमको संतति नाहिं॥

शै०-( रोती हुई ) सर्प का सा मौन क्यों गांठ लिया बोलो, बोलो, जल्दी बोलो, जिन हाथोंसे प्यारे बेटेको पालने में सुलाया उनसे लकडियां चुनती क्या शोभा देतीहूं पुत्र नेक दर्शन देकर अपनी मातासे तो बिदा होजाओ, अहो सुकुमार! इतना तो कहजाओ कि, वह तुम्हारी प्रिया अश्वपतीकी कन्या और सूर्यकुलनंदनी कि, जिसे तुम कभी अपनेसे बिलग न होने देतेथे कहाँ

है, अरे ! उसे तो तुम एक क्षणके लिये भी जुदा न कर-तेथे और वहभी सदैव तुम्हारे मनको हाथपरही लिये रहतीथी तुम्हारी सास मालवीको क्या उत्तर दूंगी–

द्यु०–अरे बेटा क्या स्वर्ग तुमको हमसे भी अधिक प्रिय है, हे सूर्य देव ! आज तुम अपना सर्वतेज हमपर ही दिखलागये–

दो०–दीनदयाल कृपाल तुम, आंधोकर यशलीन।
तउ अनसन्तोषी भये, दांत पुत्रपर दीन ॥

हे राजन् ! कुछशोच मतकरो तुम्हारी पुत्रबधूके शील और पातिव्रत धर्मका प्रभाव तुम सबसे बढ़कर है तुम्हारी सन्तान युगानयुग पर्यंत अखंड राज्य करैगी-

द्यु०– ( चकितसाहोकर ) ऐसी जलती हुई आग में यह पानी कौन छिडकता है, यह तो साक्षात् देववाणी है परंतु बड़े आश्चर्यकी बात यह है कि,धर्मराज तो बेटे का जीव लेने गया है आकाशवाणी यह कहती है, देखो रानी सावित्रीके प्रतापसे आज हमपरदैवभी प्रसन्न है-

शै०– ( रोती हुई ) महाराज आप क्या कहते हैं कुछ मेरी तो समझमें नहीं आता, कहां है सत्यवान आपका पुत्र ? और कहां है आपकी पुत्रवधू ? यह सब असत्य है, किसी आश्रमवासी ब्राह्मणने सन्तोष दिलाने को ऐसा कह दिया है, हाय ! हाय ! क्या आपने यमराजके वाक्य नहीं सुने–

दोनों–अरे बेटा ! अरे बेटा सत्यवान् कहां है ! कहां है ! ( एक ओर को रोते हुए जाते हैं )–

( स्थान गौतम ऋषिका आश्रम )

( गौतम और उनका शिष्य आते हैं )

गौतम–( द्युमत्सेनको दूरसे देखकर आपही आप) आज सलवाधीश की यह क्या दशा है ( शिष्यसे ) देखो आज यह आंखोंसे आँशू बहाता और बेटा बेटा

पुकारता पागलोंकी भांति क्यों घूमता फिरता है, इसका बेटा कहीं चला गया अथवा यमराज के फन्देमें पड गया, राज्यऋषि की वृद्धावस्था में यह क्या दशा हुईहै, ईश्वरकी विचित्रता जान नहीं पड़ती इस्में भी कुछ उसकी बुद्धिमानीहै वह देखो शैल्याभी अपने बाल बखेरे और हाहाकार करतीहुई चलीआतीहै सन्तजनोंको उचितहै कि, आपत्तिमें पडेहुए दीनोंकी सहायता करें, चलो इनसे वृत्तान्ततो पूंछें कि दैवके किस कोपमें व्याकुल फिरतेहैं-

शिष्य-चलिये महाराज ( उठखडा होताहै )

दोनों-( द्युमतसेनके पास जाकर ) हे धर्मज्ञ! आपकी यह दशा क्यों हुई-

द्यु०-( कुछ ध्यान नहीं देता ) अरे बेटा! मुझे इस दशामें छोड़ और बनकी ओर मुखमोड कहां चलेगये, हे पुत्र! दर्शन दो, अरी पुत्री! दर्शनदे ( रोताहै )

गौ०-( धीमेस्वरसे ) हे सज्जन! यदि हम किसी योग्य नहीं बरन् दूसरेपर जतानेसे दुःखकी हानि होतीहै यदि हमसे कुछ बनसके तो वर्णन कीजिये हम यथाशक्ति आपकी सेवामें तत्परहैं, आपके नेत्रोंकी मेघ वृष्टी हमारे हृदयको बिजुलीके समान दग्ध कररही है, धैर्यवानहो अपना मुखारविंद खोलिये और मुझे इस दुःखसे छुडाकर अपना उपकारी बनाइये-

द्यु०-( कुछ धैर्य धरकर ). क्या महाराज गौतमऋषि हैं? महाराज! अपराध क्षमा कीजिये ( हाथ जोडकर ) इस समय मेरा चित्त स्थिर नहींहै, सत्यबान प्रातःकालका साविन्नीसहित बनको गयाहै अब संध्या हुई नहीं लोटा, मैं उसके ढूंढनेको निकला, मार्गमें आकाशवाणीसे मालूम हुआकि यमराज उसका जीव लेने गया है, थोड़ी देर पीछे एक आकाश वाणी और हुई कि तेरी सन्तान

युगानयुग पर्य्यंत अखंड राज्य करैगी, महाराज! इससे थोड़े कालके लिये सन्तोष हुआ परन्तु कालेके आगे दीपक नहीं रहता और सूर्यके प्रकाश में पट बीजना नहीं चमकता ( फिर व्याकुल होकर ) अरे बेटा! वेग दर्शन दीजिये! बेटा! तुम कहां छिप रहे हो( रोता है)

गौ०-( कुछ ध्यान करके) हे राजन्! मैंने वेद अंगोंके साथ पढ़े, तपस्या बहुत की और कौमार ब्रह्मचर्य भी पाला गुरू और अग्निको भी तृप्त किया इसके प्रभावसे गुप्त आगामी वार्ता कह सकता हूं मेरा कहना सत्य जानौं सत्यवान सावित्री सहित तुमसे सजीव मिलैगा धैर्य धरो! धैर्य धरो! व्याकुल न हो-

शि०-महाराज! सत्यवानकी भार्या तप दम और आचार संयुक्त है और सुन्दर लक्षणोंके साथ सौभाग्यवान् भी है उसके साथ होते सत्यवानको कुछ भी भय नहीं है देखो शांति दिशामें मृगपक्षी बोल रहे हैं, सत्यवान बडा गुणक़ निधान है और हमारे गुरूका वचन कदापि असत्य नहीं होता इन सर्व बातोंसे निश्चय होता है कि, अवश्यही सत्यवान सजीव तुमसे मिलैगा धैर्य धरौ! धैर्य धरौ!

द्यु०-( दोनोंसे ) महाराज! आप ऋषि होकर क्यों असत्य भाषण करते हैं? मेरे नेत्र नहीं तो क्या कानभी नहीं ( रोता हुआ एक ओर को जाता हुआ ) अरे बेटा सत्यवान! अरी बेटी सावित्री! तुम कहां हो अरे बोलते क्यों नहीं-

गौ०-( अपने शिष्यसे ) "मनुष्यकी औषधि मनुष्य है" यह समय ऐसा है कि, हमको इनकी सहायता करनी उचित है, चलो हम भी इनके साथ साथही चलैं

( सब एक ओर को जाते हैं )

# अंक ४

( स्थान उसी वृक्षकी छाया जहाँ सत्यवान सोता है )

सा०–हे प्राणेश ! इस निद्रासे कब जागोगे, मुझे तो डर लगता है, हे स्वामी ! हे नाथ ! मुझे इस अखण्ड बनमें अकेली क्यों छोडते हो, हाय ! अब तुम्हारा हिया ऐसा कठोर क्यों होगया कि, उत्तर भी नहीं देते, देखो तुम्हारी प्राणप्यारीकी क्या दशा है, आंसुओंसे एक दूसरी नदी बह निकली है, कुछ तो दया करो, अरे कोई मेरे प्रियतमको समझावो, हाय ! कोई नहीं बोलता ( सत्यवानकी छाती पर हाथ धरकर ) अभी तो प्राण हैं " श्वासा जब तक आशा" अरे कोई बैदको तो लाओ " टुक जिये तो क्या " समय तो आही गया है, अरे ! कुछ उपाय तो करो, क्या इस लोक का अन्तही आया, हे प्राणेश ! तुम ऐसे निर्दयी क्यों होगये थोडे काल पहिले तो सुन्दर सुन्दर और प्रिय प्रिय बातें कर रहे थे अब क्या होगया जो बोलते भीनहीं, हा नाथ ! हा जगदीश ! मुझ अबलाको यह क्या दुःख दिखलाते हो, हे ब्रह्म कन्या ! यही दुःख दिखलानेको मुझे जन्म दिया था ? हाय ! ज्योतिषी तो कहते थे कि इस कन्याका अमर सुहाग होगा पतिने तो अभीसे निस्पृहता करली ( रोतीहै ) हा ! स्वामी ! हानाथ ! आपको. यहभी स्मर्ण नहीं कि विवाहसमय पिताजीको क्या बचन दियाथा कि " आपकी सुतासे कदापि अलग न हूंगा " अबमुझे छोड़ कहां जातेहो, इस अखंड बन में मेरा कौनहै, अपना नाम सत्यवान धराकर क्यों सत्यका त्याग करतेहो, माता पिता और राज्य भवनादिको छोड़कर केवल आपकीही प्रीतिके भरोसेपर यहां इस बनमें रहना

स्वीकारकिया अब आपभी ऐसे निठुरहोगये कि मैं कितनीबेर से पुकार रहीहूं कुछ उत्तर नहींदेते भला अब मैं कहां जाऊं सास श्वशुरको क्या मुंह दिखलाऊं, वह मुझे अभागी कहकर दोष लगायेंगे, आप तो स्वर्गको तैयार होचुके मुझे किसको सौंपते हौ, हे प्राणनाथ! पहिलेसे इतना स्नेह क्यों बढ़ाया और बढ़ायाभी तो अबएक साथ क्यों तोड़तेहौ (रोतीहुई) हेनाथ! हेस्वामी! हेराजन्! इससमय विनाआपके मेरे प्राणोंका इस देहमें रहनेका यही कारणहै कि शास्त्रानुसार आत्मघात करना महापापहै बिना पतिके स्त्रीका मरनाही भलाहै, अहो प्राणनाथ! मैंभी आपकी गतिको प्राप्तहुआ चाहतीहूं, प्रसन्नहोकर मुझे ले चलौ यहां क्यों छोड़ते हौ, हाय! क्या मैंनेकभी चकवा चकवीको वियोगरूपी कूपमें डालाथा कि जिसके बदले मुझे आज यह दिवस देखना पडताहै, हेस्वामी! हेनाथ! मुझ अबलाको क्यों त्यागतेहौ, हाय! अब मैं नष्टहुई, अपनी आज्ञाकारिणी और निरपराधी भार्याको ऐसी दशामें रोतीहुई देखकरभी सन्तोष नहीं देते, हाय, इस विपत्ति सागरमें यह दावानल कहांसे प्रगटहुई, हे प्रियभर्ता! मैं वहीहूं जिसपर थोड़े काळ पहले तुम्हारा अटल प्रेमथा देखौ तुम्हारे बिछोहके दारुण दुःखने मेरी क्या दशा करदी, तुम्हें निद्रा आतेही मेरा सुन्दररूप और योवन जिसपर मुझे केवल इसकारण घमंडथा कि वह तुम्हें प्याराथा मेरे नेत्र कपोल और बालोंको छोड़कर न जाने कहां चलागया, हाय! मैं किसभांति जीऊं तुम तो बोलतेही नहीं, यह निद्रा कैसी? अब मुझे निश्चय हुआ कि, दुष्टकालने तुम्हें आघेरा और यह तुम्हारी घोर निद्राहै, हेनाथ! हेस्वामी! (माथेसे हाथ लगा और अपने पतिके मस्तकपर झुककर रोतीहै)—

(रक्त वस्त्र धारणकिये हाथमें फांसी लिये महाराजयमराज अचानक आनकर सावित्रीकी जंघापर धरेहुए सत्यवानके शीशके निकट खड़े होतेहैं)

यमराज-( आपही आप ) यहां तो बड़ी कठिनाईहै सावित्री तो धर्मात्माहै और सत्यवानका शीश इसकी जंघापर धराहै ( सावित्रीसे ) हे बुद्धिमते ! गुणनिधे ! तू इतनी विद्या कोपाकर इस तुच्छ शरीरके लिये क्यों विलाप करतीहै, विद्याका यही फलहै कि मनकी शुद्धता और बुद्धिकी चमत्कारी हो, बुद्धिमान् इस संसारमें सुखको बहुत सुख और दुःखको बहुत दुःख नहीं मानते-

सा०-( चौंककर ) महाराज ( रोतीहै )

दोहा-मनकी तो मनमें रही, तनकी तनके माहिं ।
अधपर छोडी पीवने, और निबाही नाहिं ॥

( कुछ कडी छाती करके ) यह सत्य है परंतु जब परवत पर बिजली पडती है वह कैसाही कठोर हो फटही जाता है, इसी भांति मनुष्य की बुद्धि जब संकट पडता है कैसाही पण्डित हो ठिकाने नहीं रहती (यमराजकी दिव्य सूरतको देखकर उठ खडी होती है)

यमराज-( आपही आप ) चलो चिंता दूर हुई अब तो अपना कार्य करही लूंगा-

सा०-( हाथ जोड़कर )- महाराज ! आजतक इस दासीने कोई मनुष्य इस दिव्य सूरतका नहीं देखा इससे अपने मन में आश्चर्य मान विनयपूर्वक प्रार्थना करतीहूं कि आप कौन देव हैं और मुझशोकाग्निसे भस्म होतीहुई अबलापर कृपा करनेका क्या कारण है-

य०-हे स्वच्छ स्वभाव और पतिव्रते ! मैं केवल तेरे शील व्रतके प्रभावसे उत्तर देताहूं, सुन, मैं मृत्युका

देवसूर्यका पुत्र यमराजहूं, जीवमात्र जो इस पृथ्वीपर जन्मलेते हैं मेरे आधीन हैं तेरे पति सत्यवानकी आयू आज पूरण हुई और इसका अन्तसमय आनपहुंचा मैं इसका जीव लेनेआयाहूं–

सा०–( आपही आप ) हायरेहाय! यह आत्मघातक यह प्राणोंका हरनेवाला तो आही पहुंचा, हाय! अब मैं क्या कररहीहूं, यह तो एक क्षणभरमें अपना कामकरके जाता है मैं किस शोचमें पड़ीहूं, अब विलाप करनेसे क्या होगा, जबतक आपत्ति आवै तभी तक डरना चाहिये और जब आहीगई फिर तो भयको छोड़ धीर्यधर उपायकी चिंता करनी उचित है ( प्रगट ) महाराज ऐसा सुनागया है कि आपके तो दूत लिवाने आया करते हैं आपने स्वयम् कैसे कृपाकी हे धर्मराज! इतना अवकाश दीजिये कि इनके माता पिताओंको जाकर लिवालाऊं वे विचारे एक बेर अपने बेटेका मुख तो देखलें–

य०–हे पुत्री! मेरे दूत जिस जीवको लेजाते हैं उसे वे बड़ा कष्टदेते हैं, तेरे भर्ताका जीव स्वच्छ और निर्मल हैं इसलिये मैं आपही लेने आयाहूं ( आपही आप ) अबविलंब न करनाचाहिये ( प्रगट ) अबमैं अवकाश नहीं दे सकता इसकी आयु में एक पलभी बाकी नहीं ( फांसी डाल जीव निकाल दक्षिण दिशाको जाता है )

सा०–( सत्यवानके मृतकशरीरको देखकर ) हैं! है! यह क्या होगया ( रोती हुई ) अभी अब यह शरीर चेष्टा हीन नष्टप्रभा श्वासरहित और अप्रियदर्शी कैसे होगया! ( सिरपीटकर ) हे प्राणप्यारे! थोडे काल पहिले तो आपका मुख चन्द्रमासेभी अधिक चमकताथा अब सर्व तेज कहांगया ( चौंककर ) हाय!

क्या यह समय रोनेका है हृदयको कठोर करके यमके पीछे दौडती हुई, महाराज! ठहरिये! ठहरिये! एक प्रार्थना सुनजाइये–

( आगे आगे यमराज और पीछे पीछे सावित्री चले जाते हैं )

य०–हे साहसी सुशीला! लौटजा आजतेरी प्रीति और पतिव्रतत्वका भलीभांति प्रमाण होगया अबजा और अपनेपतिका प्रेतकर्मकर जितना जिसका संस्कार होता है वह उतनाही रहताहै तेरा इसका इसी समयतक का साथथा अब हो चुका, लौटजा–

सा०–( आँसुओंको रोककर ) हे धर्मराज सुनो!तत्व-अर्थदर्शी ज्ञानियोंने सप्तपद साथ चलनेको मित्रता कहा है और यह बात अनुभवसे भी सिद्ध है कि स्त्री और पुरुषकी मित्रता कि जो अन्तसमय तक रहती है केवल सातपद साथ चलनेसे हो जाती है, और मैत्रेय अग्निसे पाषाणका हिया भी पिघलजाता है, मैं तो आपके संग इतनी दूर आई हूं कि यहांसे प्राणपति का देह भी दिखाई नहीं देता इसलिये आपको मित्र समझकर कुछ प्रार्थना करती हूं कृपाकरके सुनिये।

( दोहा ) चन्दा तजै न चांदनी, सूरज तजै न घाम।
अंबर तजै न श्यामता, निज पति तजै न बाम॥

महाराज! कहीं लाठीके मारे पानी अलग नहीं होता जहां मेरा पति स्वइच्छा अथवा पर इच्छासे जावेगा मैं भी उसीके साथ रहूंगी यही सनातन धर्म है आधीनता मनुष्यकी प्रतिष्ठा बढाती है और आदर सत्कार कराती है, सज्जन लोग आधीनता में अति उत्तम गुण जानते हैं इसलिये मैं आपसे आधीनता पूर्वक विनय करती हूं कि, प्राणपति के संग चलनेकी आज्ञा दीजिये–

य०– हे शील गुण सम्पन्ने ! हे रूप लावण्यनिधे ! बहुत दूर आनेसे तू अवश्य असमर्थ हो गई होगी' तेरे प्रति क्षण कोमल और मधुर वचनोंने मेरा हृदय जीत लिया तेरी बातोंसे प्रसन्न होकर आज्ञा देता हूं कि अपनेपति के जीवको छोड़ कोई वर मांग और लौटजा–

सा०– मेरा श्वशुर नेत्रोंकी ज्योतिसे हीन होनेके कारण अत्यंत गहरे दुःखसागर में डूबरहा है यही वर दीजिये कि, उनके नेत्रोंकी ज्योति ठीक हो जावे–

य०– तेरी प्रार्थना स्वीकार हुई। जिस समय तेरा श्वशुर तेरे सन्मुख होगा उसकी आंखें खुल जायँगी, अधिक परिश्रमसे असमर्थ हो जावेगी, लौटजा–

सा०– धर्मराज ! सज्जनोंका धर्म है कि विपत्तिमें पड़े हुए दीनोंकी सहायता करें सज्जन लोग कोमलचित्त और दयालु होते हैं, मेरी प्रार्थना सुनिये, महाराज ! यह आप क्या कहते हैं प्राणपतिके संगमें सामर्थ्यहीन होनेका कामही क्या है, सर्व मत मतान्तरका उत्तम धर्म यही है कि मन वचन अथवा कायासे जहांतक हो सके पृथ्वी परके जीवोंकी रक्षाकरै, जो सज्जन हैं वे अपने वैरी पर भी अनुकम्पा और अनुग्रह करते हैं, यह लोक बहुधा इसप्रकार का है कि मनुष्य शक्तिकी कुशलतासे हीन हैं, मुझे चलनेकी आज्ञा दीजिये–

य०– हे पति वल्लभे ! तेरा बचन ज्ञानीके हृदय रूपी चन्द्रमाको सूर्यके समान प्रकाश देनेवाला हैं, इस समय मेरा चित्त तेरी प्रिय वाणी सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ हे अनिंदते ! तुझसे मैं अत्यंत प्रसन्न हूं अपने पतिको छोड कोई और वर मांग। और लौटजा–

सा०– मेरे श्वशुरको फिर राज्य मिले–

य०–यहभी तेरीप्रार्थनास्वीकारहुई। मार्गकठिनहैलौटजा

सा०– हे वैवस्वत! मैंभी अपने पतिके साथ रहूंगी यही सनातन धर्म है, तप, गुरुभक्ति, भर्ताका स्नेह, और आपकी कृपासे मेरी गतिकी रुकावट नहीं है, बे खटके चल सकती हूं मैं फिर मित्रताको आगे करके कुछ कहती हूं सुनिये, ज्ञानसे धर्म और धर्मसे विज्ञान प्राप्त होता है और विज्ञानही ईश्वरभक्तिका हेतु है इसीकारण बुद्धिमान्लोग धर्मको प्रधान कहते हैं क्योंकि धर्म विना जगदीश्वर भक्ति कि जो निर्वाणका मूल है नहीं प्राप्त होसकती, और जो मनुष्य जितेन्द्रिय नहीं है उससे गुरुकुलवास, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ अथवा सन्यस्त इन चारों आश्रमों मेंसे किसीका धर्म ठीक ठीक नहीं होता और जो बुद्धिमान् मनुष्य हैं वह सत्पु-रुषोंके मानेहुए एकही आश्रमधर्मका निश्चयकरके दूसरे अथवा तीसरे की इच्छा नहीं करते वरन उसी एक पर दृढ होजाते हैं इस्सेभी धर्मही प्रधान ठहरा, मेरे कहनेका तात्पर्य यह है कि पतिका जीव लेकर हम दोनोंके धर्मका क्यों नाश करते हो मुझे चलनेको आज्ञा दीजिये–

य०– हे शुभे! जिस प्रकार धूपमें आये हुए प्यासे की तृषाको अमृत मिलजाता है वैसेही तेरे वचनोंने मेरे हृदयको तृप्त करदिया अपने पतिके जीवको छोड कोई और वर मांग और लौटजा–

सा०– मेरे पिताको सौ पुत्र ऐसे दीजिये कि जिनके ऐश्वर्यसे अश्वपतिका नाम युगानयुग प्रसिद्ध रहै–

य०– तेरे वचनानुसार वर देताहूं, बेटी यह जीव तो बहुत दूर और कठिन मार्ग होकर जावेगा तू कहांतक चलेगी, देख शार्दूल मेघमालाकी गर्जना सुन

कर उसे पकड़नेको उछलता है परंतु कहां दल बादल और कहां उसका तुच्छ देह, सामर्थ्य न रहनेके कारण फिर पृथ्वीपरही गिर पडता है, तैंने अपने पतिका बहुत संग निबाहा और क्यों नहो उत्तमकुल की स्त्रियोंका यही धर्म है अब लौटजा–

सा०– हे धर्मराज! मार्गकी कठिनाई और दूरी प्राणपतिके निकट किंचितभी जान नहीं पडती मेरा चित्त आगे चलनेकोही प्रेरणा करता है, हे सूर्यपुत्र! आप सर्वपर एकसा अनुग्रह करते हैं मेरी प्रार्थना सुनिये जो बुद्धिमान् मनुष्य हैं वे सज्जन और न्यायीको अपना विश्वासपात्र बनाते हैं और प्रसन्नतापूर्वक अपना भरोसा उनपर रखते हैं क्योंकि ऐसे सत्पुरुषोंसे अनर्थदण्ड का भय नहीं होता, सज्जनलोग सज्जनोंसे मिलनेकी परम इच्छा रखते हैं इसी हेतुसे मित्रताको श्रेष्ठ कहा है, सत्पुरुषोंसे मिलाप निष्फल नहीं होता इस कारण सज्जनोंमें निवास करना उचित है, आपभी सत्पुरुष हैं आपसे यदि लाभ नहीं हो तो हानिभी न होनी चाहिये–किसी कविका वचन है–

( दोहा )

शठ सनेह जीरण बसन, यतन करत फटि जाय।
सुघर प्रीति रेशम लछा, उरझत सुरझत जाय॥

आप सर्व जीवोंको यथायोग्य दण्ड देकर सत्यमार्ग बतलाते हैं और उनको शुद्ध करतेहैं इसीलिये आपका नाम धर्मराज है, और अनुग्रह दान दया यही उनका सनातन और परम धर्म है, आप प्रतापवान और जगदात्मा सूर्यके पुत्र हैं इसीसे आपका नाम वैवस्वत है और आपकेही धर्मानुसार प्रजा अपने नित्यकार्य करती है इस हेतुसे आपका नाम धर्मराज है जितना विश्वास सज्जनोंका होता है उतना अपनी आत्माका

नहीं होता और मित्रता और प्रीतिसेही विश्वास उत्पन्न होता है इसीकारण बुद्धिमान् सज्जनोंसे ही मित्रताकी आकांक्षा रखते हैं, मैं अपनेपतिसे मित्रता कैसे छोड दूँ, मुझे चलनेकी आज्ञा दीजिये-

य०-हे बुद्धि निधे ! तेरे वचन बड़ेतीव्रहैं आजदिन पर्य्यंत मैंने किसी स्त्रीको ऐसा वाक्य उच्चारण करते नहीं सुना अपने पतिके जीवको छोड़ कुछ और वर मांग और लौटजा-

सा०-महाराज! ब्राह्मणोंका वाक्य है कि सन्तान परमधर्म है इसलिये हे मृत्युदेव! साहसी स्वभाव वाले, शूरवीर, रूपवान्, और ऐश्वर्यवान्, सौ पुत्र मेरे हों परंतु कुलको कलंक न लगे-

य०-( झटपट ) तथास्तु, हे सुमति धारिणी! अब लौटजा-

सा०-नहीं महाराज नहीं! अपराध क्षमाहो देखिये मेघमाला कैसीही सूर्यकी आड़करले परन्तु वह अपना प्रकाश दिखाताही है इसी भांति जो अच्छे पुरुष हैं उनपर कैसीही आपत्ति आनपडै और मन कैसाही-क्यों न मुरझाजाय परन्तु वे लोग अपना धर्म नहीं त्यागते और अत्यंत परिश्रमसे थकित और अति भयसे भयभीत नहीं होते ऐसे समयमें यदि कोई मित्र संघाती होजाय तब तो कैसी सुगमतासे बाट कटती है फिर तो वह मित्र उन आपत्ति रूपी मेघमालाओंको दूरकर सूर्यको निर्मल दिखलाही देता है केवल सज्जनोंकी सत्यवक्तृता और उदारताहीके आधारसे दिवसभूषण दिवाकर चलायमान और सर्वपालक पृथ्वी स्थिर है, सर्व सृष्टीके लोग सहायताके निमित्त सत्पुरुषोंकाही भरोसा रखते हैं परन्तु जब सज्जनकी

सहायताके लिये भी सज्जनही उपस्थित हो जाय फिर तो वही कहावत होती है कि "सोना और सुगन्ध" किसी कविका वचन है-

श्लोक-पितारक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।
रक्षितिस्थविरे पुत्रः नस्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति॥

भला अबमैं कहां जाऊं-

य०-हे राजकन्या! जिसप्रकार मनुष्य जीर्ण वस्त्रोंको त्याग दूसरे नवीन वस्त्रोंको धारण करता है उसी प्रकार तेरे पतिकी जीवात्माने जीर्ण शरीरको त्याग दूसरे नवीन देहको प्राप्त करना चाहा है, अहो इन्दुचाँदनी! इतनी दूर आने मेंही तेरे पैरोंमें कैसे छाले पड़गये हैं, अपने पतिके जीवको इस फांसी में देखकर यहमत समझ यह दुखी है नहीं नहीं कदापि नहीं यह जीवतो ऐसा स्वच्छ और निर्मल और तेरे शीलरूपी भानुसे तेजवंतहै कि निश्चयसेती इसे स्वर्गका सुख प्राप्तहोगा बरंच यह जीवतो स्वर्गके लिये भी शुभहै कुछ चिंता मतकर-

दोहा-मम फांसी हांसीभरी, गांसी जिन मनमान।
मीठो कुलहडा खांड़को, करुओ कहत जहान॥

अब लौटजा-

सा०-हे धर्मराज! आप तो सत्य कहतेहैं परन्तु

दोहा-बारबार दामिनिछिपति, दमकनसों सुख लेत॥
वर्षानिशि अँधियारमें, दुःखपथिकको देत॥ १॥

अहो न्यायाधीश! अपने वचनकी तो पक्षकरो देखो अभी आपने मुझे इन्दुचाँदनी कहा मेरे इन्दुको तुम्हारे राहुने ग्रस रक्खाहै फिरमैं कहां रही और देखो लौकिकमें प्रसिद्धहै कि वह चन्द्रमाभी शुभनहींहोता कि जो ग्रसाहुआही छिपजाय और अभी आप मेरेचंद्रमा को शुभ कहचुकेहो क्या अबभी अपने बचनका निर्वाह

न करोगे, महाराज ! सुनिये देहान्तमें केवल धर्मही साथ चलताहै और सारी बातें देहके साथही नष्ट हो जातीहैं, आप तो स्वयम् धर्मराजहैं फिर इस अनित्य देहकी हत्या क्यों लेते हो–

य०--हे सावित्री ! तेराभी तो नित्य पतिगुण तेरे पास है फिर इस अनित्य देहकी इच्छा क्यों करतीहै–

सा०--महाराज ! यदि समुद्र सब तरह परिपूर्ण है पर तबभी बढनेके लिये पूर्ण चन्द्रमाकी आकांक्षा रखताही है, हे वैवस्वत ! वृक्ष सदा ऐसे ऊंचे रहतेहैं मानों बादलों को छुवेंगे परन्तु जब जलसे सींचे जातेहैं और फल देते हैं तो लचक कर धरतीलौं आजाते हैं, ऐसेही नवीन जलसे पूरित होनेपर श्यामघटा नीची झुकती है और यही गति सज्जन मनुष्योंकी है–

य०--( आपही आप ) इसकी तो बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण है मुझे भी भुलावा दे दिया अब अपनी कृतज्ञताकोभी क्यों गवाँते हो(प्रगट)हे पतिव्रते ! हे पुत्री ! तेरे कोकिलाके से बैन और मृदु संभाषण तो मेरे हृदय रूपी पंकज कली को सूर्य हो गया, अब तेरी इच्छा हो सो मांग--

सा०--( कुछ और कहना चाहती है कुछशोचकर आ-पहीआप)मुझे स्वार्थसे काम इसे इसकी भूल बताकर क्यों लज्जित करूं ( प्रगट ) अब मेरी आत्माको सुख और चित्तको आनन्द प्राप्त हुआ, मेरी इच्छाको रोकनेवाली कोई वस्तु नहीं रही, बिना प्राणनाथके सर्व इसलोकके सुख और परलोकके आनन्द तृणवत् हैं, हे धर्मराज! मैं विना पतिके सुखनहीं चाहती, स्वर्ग नहीं चाहती, धननहींचाहती और तो क्या

अपने जीवात्माकोभी नहीं चाहती, आपने पुत्रोंका वर दिया तो पुत्र कारणकोभी दीजिये सतपुरुषोंकी सदा सनातन धर्मव्रती होती है, चौथावर विना मेरे भर्ताके मुझे देकर क्यों मेरा धर्म भ्रष्ट कराते हो, सज्जनोंको सज्जनोंसे भय नहीं होता और अच्छे पुरुष इन बातोंको विचार कर दूसरेकी कामनाको पूरण करते हैं और उपकार प्रतिउपकार की इच्छा नहीं रखते इसके सिवाय सज्जनोंपर दया करना भी निष्फल नहीं होता कामना पूरण करना और आदर सत्कार करना कभी नाशको प्राप्त नहीं होता इसलिये हे धर्मराज! अबमैं यही वर माँगती हूं कि मेरे पति सत्यवानको जीवदान दीजिये-

य०–हे उत्तमकुलनंदिनी! केवल तेरी बुद्धिमानी पतिव्रत और शीलमें दृढता देखकर तेरे पतिके जीवको छोड़ता हूं ( फाँस खोल दिया ) यह बड़ा चक्रवर्ती न्यायी धर्मज्ञ और प्रतापी राजा होगा इसकी आयु चार सौ वर्षकी होगी और तेरी संतानभी युगानयुग पर्य्यन्त अखंड राज्य करेगी ( पर्वतपर चढ़ता हुआ ) धन्यहो सावित्री! तुम धन्यहो, तुम साक्षात् धर्मावतारहो इस लोकमें तुमने सुयश पाया और परलोकमेंभी इससे अधिक मिलैगा, तुम मनुष्य और ईश्वर दोनोंकी आंखों में प्रशंसाके योग्य हो, चंद्रमण्डलमें लोगकलंक बतलाते हैं परन्तु तुममें लेशमात्रभी नहीं अबजाओ, और सलवादेशका प्रधान तुम्हारे श्वशुरको लिवाने आता है ( अन्तर्धान होजाता है )

सा०-( आकाशकी ओर ) दण्डवत् महाराज–

( जाती है )

# अंक ५

( स्थान उसी वृक्षकी साया जहां सत्यवानका मृतक शरीर पड़ा है )

( सावित्री आतीहै )

सा०-( सत्यवानके देहको स्पर्शकरके आपही आप ) गर्माईतो आगई है ( सत्यवानके हाथको अपने हाथमें लेकर धीमें स्वरसे ) हे प्राणनाथ! उठो सांझ होनेसे आकाशके किनारोंपर लाली दौड़गई अब वहभी छिपी जाती है, कुमुदखिले, कमल मुरझाये, चिडियोंका चहचहाट बन्दहुआ, और झींगरोंकी झन्कारें होने लगीं, एक ओरसे शीतल मन्द सुगन्ध पवनके झकोरे दूसरी ओरसे सिंहोंकी दहाड़ और राक्षसोंके टंकोरे सुन पडते हैं, हे प्रियतम आपके विना इस अबलाको अकेली डर लगता है, जिस प्रकार गुणवानके आगे निर्गुणकी मति मन्द होजाती हैवैसेही कलानिधिकेसामने सारे आआश के तारागण मन्दहो रहे हैं, अंधेरेके कारण दूरके वृक्षोंकी पत्तियां नहीं दिखाई पड़तीं केवल परब्तके टीलेसे जान पड़ते हैं देखो! कठोर वचन बोलनेवाले राक्षस इधर उधर घूमरहे हैं, बनके जीव जन्तु व्याघ्र भालु आदिक का कैसा भयानक शब्द सुन पड़ता है मानो वर्षा ऋतुमें मेघघटा घेर रही है, घमसान वृक्षोंमें होकर जो चांदनीकभी २ चमक जाती है वही मानौं विज्जुछटा है ओसकी नान्ही २ फुहारें मेघवृष्टिको स्पष्ट दरशा रही हैं मृगोंकी उछल कूदसे कैसा शब्दहो रहाहै, जंगली गीदड़ दक्षिण और पश्चिम दिशाओंमें स्थित होकर अपने रुदनसे कैसी नम्रता दिखला रहेहैं, मानो बन बासियोंसे प्रार्थना करते हैं कि यहां के दुष्ट जीवोंसे हमको बचाओ मन्द मन्द सुगन्ध चित्र विचित्र फूलोंकी घ्राण इन्द्रीको तृप्त

कर रही है चहूं ओरसे सन्नाटे का शब्द कान में पड़ता है, हे प्राणनाथ ! इस समय निराचित्त विह्वल और हृदय कम्पायमान हो रहा है ( कुछ ऊंचे स्वरसे ) देखिये तुम्हारी प्रिया कबसे पुकार रही है (हाथको कुछ दबाकर ) चेत करो ! चेत करो ! अहो सज्जन चेत करो, अहो राजन् चेत करो–

स०–( आंखें खोलकर मन्द स्वरसे ) हे प्राणप्यारी ! इस समय मेरे नेत्र ऐसे असमर्थ काहेसे हो गये कि तुमको भली भांति देख भी नहीं सकता प्रभातही तुम्हारे संग अपने आश्रमसे चला था, यहीं आकर तुम तो फल फूलादिक चुननेलगी और मैंने एकवृक्षकी डाली को काटकर गिराया अधिक परिश्रमसे थकित हो तुम्हारी जंघापर विश्राम लेनेको लेट गया और मुझे निद्रा आगई स्वप्नमें एक भयानक मनुष्यको जो रक्त वस्त्र धारण किये था देखा इतनातो मुझे स्मरणहै–

सा०–हे स्वामी वह स्वप्न नहीं था–

स०–तो क्या था–

सा०–अबयमकी बहन रात्री आई सूर्य गया चंद्रमा आया सुन्दर सुन्दर पतोंपर ओसबिन्दु मोतियोंके समान चमक रहे हैं, बनीका राजा अपने भवनोंसे शिकारको निकला है, उस का भयानक शब्द सुनकर मेरा कलेजा कांप रहाहै प्रातःकाल सर्व व्यवस्था कहूंगी

स०–( उठकर बैठाहोता है ) क्या आज हमको यहीं रात्रि हो गई प्रिये ! अब इस सघन वनमें होकर तुम्हें कैसे ले चलूंगा उन वृक्षोंके बीचमें होकर देखो वह कालीघटा कैसी उठीहै मानो एक बडी पंक्ति हाथियोंकी चली आती है, वह देखो उसने चंद्रमाको भी ग्रस लिया अब कैसा अंधकार छागया है कुछ दृष्ट

नहीं पडता मार्ग जान नहीं पडता और तुम अबला स्त्री हो इस समय कैसे चल सकोगी–

सा०–हे प्रियभर्ता! देखिये इस सुन्दर बनके बीच सूखे २ वृक्ष खडेहैं और पवनके झकोरोंसे बासोंमें एक दूसरेसे रगडकर अग्नि प्रज्वलित हो गई है काष्ठादिक यहीं बहुत पडे हैं, वहां जाकर थोडीसी अग्नि ले आऊँ अपने चारो ओर प्रज्वलित कर लेंगे और बनके दुष्ट जीवोंसे अपनी रक्षा करेंगे अब चलें किधर, मार्ग तो सूझही नहीं पड़ता कहीं भटकते फिरेंगे प्रातःकाल होनेपर जिधर आपकी प्रसन्नता हो चलियेगा एक रात्री यहीं विश्राम सही–

स०–नहीं, नहीं, प्रिये नहीं! प्राणप्यारी! अब मेरे शिरकी पीडा दूर हुई, सर्व अंग सावधानहैं, अब मेरी यही इच्छा है कि इसीसमय चलकर अपने माता पिताओंके चरणों का दर्शनकरूं ऐसा परिश्रम मैंने कभी नहीं उठाया, सांझ होनेसे पहिले ही माता मुझे कहीं जाने न देतीथी बरन् दिवसमें भी मेरे बाहर चले आनेपर माता पिता दोनों चिंता करते थे, जिस दिन हमारा तुम्हारा प्रथम मिलाप उस बनमें हुआ मुझे कुछ देर हो गई थी माताने बडे प्यारसे वर्जा कि हे पुत्र हमको इस दशामें केवल तेराही सहारा है और तेरी ही चितवन जीवन मूल है, बेटा इतना विलम्ब क्यों लगाया करते हो और हमें अकेला छोड़ जाते हो. आज तो रात्री हो गई न जाने मेरे वियोग में उनकी क्या दशा होगी निश्चय है कि वे बडेही दुःख में पडे होंगे और उनका चित्त बडाही क्लेशित होगा और अवश्य मेरे ढूंढनेको निकले होंगे, कल रात्रीकोही मुझसे कहा था कि हम दोनोंकी दृष्टी और

वंश आदि जो कुछ है तुहीं है एक महूर्तकोभी हमसे अलग न हुआ कर, भला ऐसा स्नेह और ऐसी प्रीति रखनेवाले मातापिताओंसे ऐसी दशा में कैसे पृथक्रह सकता हूं और सत्यभी तो है वे विचारे दोनों वृद्ध हैं अब क्या हमारे सिवाय और कोई लाठी उनके सहारे की है वे हमें ढूंढ़ते २ कहां भटकते फिरते होंगे पिताजीको तो नेत्रोंसे सूझही नहीं पडता है, धिकार है मेरी निद्रापर कि जिसके कारण माता पिताने इतना संताप उठाया और मैंनेभी संशय पाया मेरा जीवन उत्साह मातापिताकेही संग और उन्हींकी सेवामें है, हे शुभे, मुझे अपनी इतनी चिंतानहीं कि जितना उनका शोच है उनका जीवन मुझसेही है और उनकी सेवा ही मेरा परम धर्म है अब मैं नहीं जानता कि उनकी क्या दशा है ( आँखोंपर हाथ लगाकर रोता है )-

सा०-( सत्यवानके आंसूपोंछकर ) हे भगवन् ! हे जगदीश ! हे दीनबन्धुदीनानाथ ! यदि मैंने कुछ तप किया दान दिया अथवा होम किया है तो उसके प्रभावसे मेरे सास श्वशुर और भर्ताकेसंकटका निवारणकरो-

स०-अब मुझे मातापिताके दर्शनकी अत्यंत अभिलाष लगरही है, चलो विलम्ब मत करो प्रातःकाल चलती वेर पिताजीने कहा था कि आज शीघ्रहीलौट आना जिसकेपलटे आज हमको यहीं रात्री होगई मैं अपनीआत्माकी साक्षी करके कहता हूं कि यदि तुम्हारी बुद्धिधर्ममें है और मुझे जीवता चाहतीहो तो आश्रमको ले चलो ( उठ खड़ा होता है ) चलो प्रिये ( सावित्रीको हाथसे उठाकर)आओ आओ तुम्हाराही आधार हमारा जीवन मूल है, चलो माता पिताके दर्शन करैं-

सा०-( आगे होकर ) आइयें चलिये ( कुछ चलकर ) अब किधर चलें-

स०-वह देखौ चन्द्रमा निकलआया और बादल हट गया वृक्षोंके बीचमें होकर चांदनी आरही है ( हाथसे बतलाकर ) इसी मार्ग चलौ कुछ शोच मत करो इस पलास खण्डमें दो मार्ग हैं, दक्षिणहाथको चलौ मैं सावधान हूं-

( नैपथ्यमें )

अरे बेटा सत्यवान! अरी पुत्रवधू सावित्री ! कहां हो कहां हो तुम बोलते क्यों नहीं -

( नैपथ्यमें रोनेका शब्द सुन पडता है )

स०-प्रिये देखो मैंने कहाथा वहीहुआ माता पिता पुकारते फिरते हैं ( ऊंचेस्वरसे ) पिताजी! हम आये कुछ चिन्ता मत करौ.

( नैपथ्यमें बहुतसे आदमियोंका शब्द )

आहा ! अहा !! अहा !!! अहा !!! अहा !!! हे परमेश्वर ! यह क्या माया है ! आश्चर्यहै !! आश्चर्य है !!

( द्युमतसेन शैल्या गौतम और उनका शिष्य आतेहैं )

गौ०-( द्युमतसेनसे ) आप कुछ आश्चर्य न करैं मैं सब समझा दूंगा-

सत्यवान और सावित्री--अहा ! महाराज ऋषिराजभी हैं, हम आप सर्वको नम्रतापूर्वक दण्डवत करतेहैं-

गौ०-तुम्हारी परस्पर प्रीति इससेभी अधिकहो-

सा०-( सत्यवानसे ) हेप्राणनाथ ! ( गौतमकी ओर इशारा करके) महाराजकी ही दयासे मुझे आपसरीका प्रियवर मिलाहै--

द्यु०-( सत्यवान और सावित्रीको छातीसे लगाताहै) हे लालन ! तुम कहां थे, ( नेत्रोंकी ज्योति ठीक होजा-

तीहै ) तुमको छातीसे लगातेही मेरी आंखें खुलगई, यह क्या? आज दैव हमारे ऊपर प्रसन्नहुआ--

शै०--( सत्यवान और सावित्रीको छातीसे लगाकर गद्गद् बाणीसे ) हे मेरे आंखोंके तारे! कहां थे ( द्युमत सेनके नेत्रोंको देखकर गौतमसे ) महाराज! आज यह क्या आश्चर्य कीसीबातें होरहीहैं--

गौ०--मैं कहूंगा--

द्यु०--( सत्यवान और सावित्रीसे ) अब तुम अपनी सर्व व्यवस्था कहो, इतना विलम्ब कहां लगाया--

गौ०--हे राजन्! सज्जन मनुष्य अपनी प्रशंसा नहीं करते और सत्यवानको कुछ सुधि नहीं अपने तपोबलसे जानकर मैं कहताहूं सुनिये, जब यमराज सत्यवानका जीव लेकर चलनेलगे तो आपकी पुत्रबधूभी उसके पीछे दौड़ी और अपने मधुर संभाषणसे वैवस्वतको प्रसन्न करके पांचबर लिये, अर्थात्, आपके नेत्र, आपका राज्य, अपने भ्राताओंका जन्म, अपने पुत्रों का जन्म और चारसौ वर्षको अपने पतिकी आयु, इसी में इनको बिलम्बहुआ--

द्यु०--( शैल्यासे ) जबहींवह आकाश वाणी हुईथी--

गौ०--क्या कहीं देववाणी भी असत्य हुईहै--

द्यु०--( प्रसन्नमुख होकर ) महाराज यह पुत्र शोकही हमारे सुखका कारण हुआ आपकी अनुग्रहसे पुत्रकी आयु बढगई, हमारा और महाराज अश्वपतीका उद्धार हो गया, इस शोकने सूर्यके समान पहिले दुःख और पीछे सुख दिखलाया ( सावित्रीसे ) धन्यहो, बेटी तुम धन्यहो--

स०--( आश्चर्यमें होकर हौले सावित्रीसे ) हे प्रिये!

भी तुमने कहाथा कि वह स्वप्न नहींथा, यमराजसे क्या क्या बातेंहुई--

सा० अब समय नहींहै फिर कभी सुन लीजियेगा--

गौ० क्यों नहीं !उपाय और साहस, धीरज, और बुद्धिबल, पराक्रम, शील और गुणज्ञता, यह आठ गुण जिसमें दृढ होतेहैं, उस्से ईश्वरभी शंका करताहै धर्मराजकी कौन गिन्तीहै, हे राजन्. ! सावित्रीने तुम्हारे कुलको बड़ा प्रकाशित किया सत्यहै इस संसारमें वही मनुष्य धन्यहै कि जिसको स्त्री सुशीला पतिव्रता, और आज्ञाकारिणी मिले, सन्सारी दुःख सुखतो प्रारब्धानुसार होतेही हैं, स्त्रीके सुशीला होनेसे पतिकाभी उद्धार होजाता है किसी कविने सत्य कहा है-

दोहा-जहां न गोली तीरगति, नाहिं चलै तरवार।
तहां बुद्धि युत बुद्धिते, सकत आपदा टार॥

हे राजन्! धन्यवाद, धन्यवाद-

(शलवादेशका प्रधान आता है)

प्रधान-महाराजका सदा जय जयकारहो-

द्यु०-(पीछे देखकर) अहो प्रधान ! तुम यहां कैसेआ

प्र०-महाराजका दर्शन करने और कुछ प्राथना

(आपही आप) अब तो इनको दिखनेभी

चलो, यहभी अच्छा हुआ-

द्यु०-कहो तो-

प्र०-(हाथ जोड़कर) महाराज वह

राजा कि जिसने महाराजको इतन

होगया शलवादेशकी प्रजा आ

स्मर्णकरती है, और इसीलि

और सैन्याधिपतियोंने स

लिवानेको भेजा है,

नरेश होकर अपनी प्रजाका पालन कीजिये और सर्वको सुख दीजिये–

द्यु०–मुझे तो अब अपना बुढापा इसी बनमें काटने दो, यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो सत्यवानको लेजाओ–

गौ०–नहीं, नहीं, प्रजाकाभी तो मान रखना उचितहै आप पधारें–

द्यु०–ऋषिके बचनका अपमान न चाहिये (सावित्रीसे) अहो पतिवल्लभा, तुम धन्यहो और तुम्हारे माता पिता धन्यहैं जिनकी कुक्षामें तुमने जन्म लिया मैंभी तुम्हारे सत संगसे धन्यभागी हुआ इस वृद्धावस्थामें तुमने मुझे पुत्रशोकसे बचाया, नेत्रदिये, गया हुआ राज्य दिलाया, अपने पिताका वंश चलाया, और अपने सुहाग भागकी रक्षाकी बेटी! हमारे देशका प्रधान बुलाने आया है अब राजमहलको चलो औरअपने स्वामीके साथ प्रसन्नतापूर्वक आनंद विनोदमें दिन व्यतीत करो–

सा०–(हाथ जोडकर)महाराज ! आप इतनी प्रसंशा ...गों करते हैं,मैं किस योग्य हूं,यह तो मेरा धर्मही है–

...तम और उनका शिष्य–हमारा तो आशीर्वाद ...–

...षियोंको हमारी दण्डवत हो–

...त्वान्की स्त्री सावित्रीके प्रभावसे ...ा फिरा भगवान–सबका फेरे–

(सब जाते हैं)

(पटाक्षेप)

...नाटक समाप्तम्।

...–खेमराज श्रीकृष्णदास,
...वाना–खेतवाडी–मुम्बई.